॥ श्रीः ॥

# याज्ञवल्क्यशिक्षा।

## श्रीमद्याज्ञवल्क्यमहर्षिप्रणीता।

(यजुर्वेदसंहितापाठस्वरादिज्ञानोपयोगिनी)

मुरादाबादनिवासि स्व० पण्डित श्रीज्वालाप्रसाद-
मिश्रविरचितया

भाषाटीकया समलंकृता।

सेयं

क्षेमराज-श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणालये

मुद्रयित्वा प्रकाशिता।

संवत् १९७५, शके १८४०.

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटा लैन, निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस बम्बईमें अपने लिये छापकर प्रकाशित किया.

श्रीः।

# अथ याज्ञवल्क्यशिक्षा प्रारभ्यते।

श्रीगणेशाय नमः।

अथातस्त्रैस्वर्यलक्षणंव्याख्यास्यामः॥
उदात्तश्चानुदात्तश्चस्वरितश्चतथैवच॥
लक्षणंवर्णयिष्यामिदैवतंस्थानमेवच॥ १॥

अब यजुर्वेदियोंके उपयोगिनी याज्ञवल्क्यशिक्षाका आरंभ करते हैं। प्रथम तीनों स्वरोंका लक्षण कहते हैं, उदात्त अनुदात्त और स्वरित यह तीन स्वर हैं। इनके लक्षण देवता स्थान वर्णन करता हूं॥ १॥

शुक्लमुच्चंविजानीयान्नीचंलोहितमुच्यते॥
श्यामंतुस्वरितंविद्यादग्निरुच्चेतुदैवतम्॥ २॥

उदात्त स्वर शुक्ल, अनुदात्त लाल, स्वरितका श्याम रंग है, उदात्तका अग्नि देवता॥ २॥

नीचेसोमंविजानीयात्स्वरितेसविताभवेत्॥
उदात्तंब्राह्मणंविद्यान्नीचःक्षत्रियउच्यते॥ ३॥

अनुदात्तका चन्द्रमा, स्वरितका सविता देवता है, उदात्त ब्राह्मण, अनुदात्त क्षत्रिय,॥ ३॥

वैश्यंतुस्वरितंविद्याद्भारद्वाजमुदात्तकम्॥
नीचंगौतममित्याहुर्गार्ग्यंचस्वरितंविदुः॥ ४॥

स्वरितस्वर वैश्य वर्ण है. उदात्तका भरद्वाज; अनुदात्तका गौतम और स्वरितका गार्ग्य ऋषि हैं॥ ४॥

विद्यादुदात्तंगायत्रंनीचंत्रैष्टुभमुच्यते॥
जागतंस्वरितंविद्यादतएवंनियोगतः॥ ५॥

उदात्तका गायत्री, अनुदात्तका त्रिष्टुप्, स्वरितका जगती छन्द जानना चाहिये॥ ५॥

गांधर्ववेदेयेप्रोक्ताःसप्तषड्जादयःस्वराः॥
तएववेदेविज्ञेयास्त्रयउच्चादयःस्वराः॥ ६॥

गान्धर्व वेदमें जो षड्ज मध्यम धैवत पंचम ऋषभ गांधार निषाद यह सात स्वर कहे हैं, वे वेदमें उदात्त अनुदात्त स्वरितके अन्तर्गत जानना ॥ ६ ॥

उच्चौनिषादगांधारौनीचौऋषभधैवतौ ॥
शेषास्तुस्वरिताज्ञेयाःषड्जमध्यमपंचमाः ॥ ७ ॥

निषाद गांधार उदात्त हैं, ऋषभ धैवत अनुदात्त हैं, षड्ज मध्यम पंचम यह स्वरित हैं ॥ ७ ॥

षड्जोवेदेशिखंडीस्यादृषभःस्यादजामुखे ॥
गावोरटंतिगांधारंक्रौञ्चाश्चैवतुमध्यमम् ॥ ८ ॥

वेदमें षड्ज स्वर मयूरकी वाणी है, बकरीके मुखसे ऋषभका शब्द होता है, गौ गांधार और क्रौञ्च ( चकवा ) मध्यम स्वरसे बोलता है ॥ ८ ॥

कोकिलःपञ्चमोज्ञेयोनिषादंतुवदेद्गजः ॥
आश्वश्चधैवतोज्ञेयःस्वराःसप्तेतिगीयते ॥ ९ ॥

कोकिला पंचम स्वरसे, हाथी निषाद स्वरसे, घोडा धैवत स्वरसे बोलता है. इसप्रकार यह सात स्वर हैं ॥ ९ ॥

निमेषमात्रःकालःस्याद्विद्युत्कालस्तथापरे ॥
अक्षरात्तुल्ययोगाच्चमतिःस्यात्सोमशर्मणः ॥ १० ॥

जितनी देरमें पलक लगे इतने कालका नाम निमेष है, कोई कहते हैं जितने समयमें बिजली चमके इतने कालको निमेष कहते हैं, वर्णोंके असमान सम्बन्धके उच्चारणमें जितना समय लगे वह एक मात्रा कहाती है. यह सोमशर्माका कथन है ॥ १० ॥

सूर्यरश्मिप्रकाशाद्याकणिकायत्रदृश्यते ॥
आणवस्यतुसामात्रामात्राचचतुराणवा ॥ ११ ॥

सूर्यकी किरणोंके प्रकाशमें जो अणु दिखाई देते हैं वही अणुकी मात्रा है, यह चार अणुकी एक मात्रा होती है ॥ ११ ॥

मानसेचाणवंविंद्यात्कण्ठेविंद्याद्विराणवम् ॥
त्रिराणवंतुजिह्वाग्रेनिस्सृतंमात्रिकंविदुः ॥ १२ ॥

मनमें अणु कण्ठमें आनेतक दो अणु, जिह्वाके अग्रभागमें आनेमें तीन अणु और बाहर निकलनेपर मात्रा होती है ॥ १२ ॥

अवग्रहेतुकालःस्यादर्धमात्राप्रकीर्त्तिता ॥
पदयोरंतरेकाल एकमात्राविधीयते ॥ १३ ॥

"समासविशिष्ट पदके पूर्वभागमें एक मात्रा काल विराम करके अग्रिम पदका उच्चारण करना चाहिये यह अवग्रह है याज्ञवल्क्यके मतमें अर्धमात्रिक कालका विराम नहीं कहा है" जितना समय अवग्रहमें लगे वह अर्धमात्राका समय है, और पदोंके अन्तरमें एक मात्रा विरामकाल है ॥ १३ ॥

ऋचोर्द्धेतुद्विमात्रःस्यात्त्रिमात्रःस्यादृगंतके ॥
रिक्तंतुपाणिमुत्क्षिप्यद्वेमात्रेधारयेद्बुधः ॥ १४ ॥

आधी ऋचा होनेपर दो मात्राका समय, और ऋक्की पूर्तिमें तीन मात्राका समय है, रीते हाथको दो मात्रा पर्यन्त बुद्धिमान् उठावे ॥ १४ ॥

एकमात्रोभवेद्ध्रस्वोद्विमात्रोदीर्घउच्यते ॥
त्रिमात्रस्तुप्लुतोज्ञेयोव्यंजनश्चार्द्धमात्रकम् ॥ १५ ॥

एक मात्राका ह्रस्व, दोका दीर्घ, तीनका प्लुत होता है, और व्यंजन अर्ध मात्राका होता है ॥ १५ ॥

विवृतोचावसानेचऋचोर्द्धेचतथापरे ॥
पदेचपादसंस्थानेशून्यहस्तंविधीयते ॥ १६ ॥

विवार प्रयत्नमें अवसानमें अर्धऋचामें तथा पर पदमें, पदके अन्तमें, शून्य हस्तका प्रयोग करे ॥ १६ ॥

प्रणवंतुप्लुतंकुर्याद्व्याहृतीर्मातृकाविदुः ॥
चापस्तुवदतेमात्रांद्विमात्रांवायसोब्रवीत् ॥ १७ ॥

ॐकारको प्लुत उच्चारण करै व्याहृति मातृकारूप हैं, नीलकण्ठ एक मात्रासे बोलता है, काक दो मात्रासे बोलता है ॥ १७ ॥

शिखीवदेत्रिमात्रांवैमात्राणामितिसंस्थितिः ॥
वर्णोजातिश्चमात्राचगोत्रंछन्दश्चदैवतम् ॥ १८ ॥

मोर तीन मात्रासे बोलता है, वर्णोंकी जाति मात्रा गोत्र छन्द देवता ॥ १८ ॥

एतत्सर्वसमाख्यातंयाज्ञवल्क्येनधीमता ॥
हस्तौतुसंयतौधार्यौजानुभ्यामुपरिस्थितौ ॥ १९ ॥

यह सब बुद्धिमान् याज्ञवल्क्यजीने वर्णन किया है। अब अध्ययनविधि कहते हैं नियमित होकर अपने दोनों हाथोंको दोनों जांघोंपर धरै ॥ १९ ॥

गुरोरनुमतंकुर्यात्पठन्नान्यमतिर्भवेत् ॥
ऊरुभागेतृतीयेतुकरंविन्यस्यदक्षिणम् ॥ २० ॥

और गुरुकी आज्ञासे अनन्यमति होकर पाठ आरंभ करै, ऊरुके तृतीय भागमें दहिना हाथ धरके ॥ २० ॥

प्रसन्नमानसोभूत्वाकिंचिन्निम्नमधोमुखम् ॥
प्रणवंप्राक्प्रयुञ्जीतव्याहृतीस्तदनंतरम् ॥ २१ ॥

प्रसन्न मनसे कुछ मुख नीचा किये हुए पहले ॐकार और फिर व्याहृतियोंका उच्चारण करके ॥ २१ ॥

सावित्रींचानुपूर्व्येणततोवेदान्समारभेत् ॥
कूर्मोङ्गानीवसंहृत्यचेष्टांदृष्टिंदृढंमनः ॥ २२ ॥

फिर गायत्रीको पाठकर वेदोंका आरंभ करै, जिस प्रकार कछुआ अपने अंग संकुचित करलेताहै, इसीप्रकार चेष्टा दृष्टि और मनको दृढ करै ॥ २२ ॥

स्वस्थःप्रशांतोनिर्भीकोवर्णानुच्चारयेद्बुधः ॥
नाभ्याहन्यान्ननिर्हन्यान्नगायेन्नैवकंपयेत ॥ २३ ॥

स्वस्थ, शान्त, और निर्भय होकर अक्षरोंको बुद्धिमानीसे उच्चारण करै, न एक वर्णके उच्चारणमें दोदो उच्चारण करै, न तोडकर पढै, न गाता हुआ और न कम्पित होताहुआ पढै ॥ २३ ॥

यथैवोच्चारयेद्वर्णास्तथैवैतान्समापयन् ॥
निवेश्यदृष्टिंहस्ताग्रेशास्त्रार्थमनुचिन्तयेत् ॥ २४ ॥

जिसप्रकार वर्णोंको उच्चारण करै उसीप्रकार समाप्त करै, दृष्टिके अग्रभागमें हाथको रखकर शास्त्रके अर्थको विचारे ॥ २४ ॥

सममुच्चारयेद्वर्णान्हस्तेनचमुखेनच ॥
स्वरश्चैवतुहस्तश्चद्वावेतौयुगपत्स्थितौ ॥ २५ ॥

हाथसे स्वर और मुखसे वर्णोंको उच्चारण करै, स्वर और हाथ यह दोनों समान ही स्थित होते हैं ॥ २५ ॥

हस्तभ्रष्टःस्वरभ्रष्टोनवेदफलमश्नुते ॥
नकरालोनलंबोष्ठोनाव्यक्तोनानुनासिकः ॥ २६ ॥

हस्त और स्वरसे भ्रष्ट होनेसे वेदपाठका फल नहीं मिलता, तीक्ष्ण बोलना

लम्बे होठ करना, जो समझमें न आवे ऐसा अव्यक्त उच्चारण करना ॥ २६ ॥

गद्गदोबद्धजिह्वश्चनवर्णान्वक्तुमर्हति ॥
प्रकृतिर्यस्यकल्याणीदंतोष्ठौयस्यशोभनौ ॥ २७ ॥

बोलनेमें कंठका गद्गद होना, जिह्वाका बद्ध होना, इनसे वर्ण उच्चारण नहीं हो सकता जिसकी प्रकृति अच्छी है और जिसके दांत तथा होंठ अच्छे हैं ॥ २७ ॥

प्रगल्भश्चविनीतश्चसवर्णान्वक्तुमर्हति ॥
शंकितंभीतमुद्घुष्टमव्यक्तमनुनासिकम् ॥ २८ ॥

जो उच्चारणमें प्रगल्भ और गुरुजनोंके सामने नम्रता विनयसे संपन्न है वह वर्ण उच्चारण अच्छीरीतिसे कर सकता है. शंकित, भीत, ऊंचा बोलना, अस्पष्टता, नासिकामें बोलना ॥ २८ ॥

काकस्वरंमूर्ध्निगतंतथास्थानविवर्जितम् ॥
विस्वरंविरसंचैवविश्लिष्टंविषमाहतम् ॥ २९ ॥

काककी समान बोलना सब वर्णोंको मूर्द्धामें उच्चारण करना स्थानरहित बोलना, कुस्वरसे बोलना, अमिलित बोलना, विषमरूपसे आहत करना ॥२९॥

व्याकुलंतालहीनंचपाठदोषाश्चतुर्दश ॥
संहितास्वारबहुलः पदसंज्ञासमाकुलः ॥ ३० ॥

व्याकुलता, लयरहित होना यह चौदह पाठके दोष हैं। संहिता, स्वरकी अधिकाई और पद संज्ञासे व्याप्त ॥ ३० ॥

क्रमसंधिसमाकीर्णोदुस्तरोमंत्रसागरः ॥
ऋक्संहितांत्रिरभ्यस्ययजुषांवासमाहितः ॥ ३१ ॥

क्रम और संधिसे युक्त मंत्रसागर बडा दुस्तर है ऋक् वा यजु संहिताको तीनवार सावधानीसे अभ्यास करके ॥ ३१ ॥

साम्नांवासरहस्यांचसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥
संहितानयतेसूर्यंपदंचशशिनःपदम् ॥ ३२ ॥

वा रहस्यसहित सामका पाठ करके सब पापोंसे छूट जाता है. संहिता सूर्यलोकको पद चन्द्रके लोकको ॥ ३२ ॥

क्रमश्चनयतेसूक्ष्मंयत्तत्पदमनामयम् ॥
कालिंदीसंहिताज्ञेयापदयुक्तासरस्वती ॥ ३३ ॥

और क्रम सूक्ष्म अनामय पदको प्राप्त करता है, संहिता कालिन्दी है पदयुक्त सरस्वती है ॥ ३३ ॥

क्रमेणावर्त्ततेगंगाशंभोर्वाणीतुनान्यथा ॥
यथामहाह्रदंप्राप्यक्षिप्तोलोष्टोविनश्यति ॥ ३४ ॥

क्रमपाठ गंगा है, यह शिवकी वाणी अन्यथा नहीं है, जैसे महाह्रदमें डाला हुआ ढेला नष्ट हो जाता है ॥ ३४ ॥

एवंदुश्चरितंसर्ववेदेत्रिवृतिमज्जति ॥
आम्रपालाशबिल्वानामपामार्गशिरीषयोः ॥
वाग्यतःप्रातरुत्थाय भक्षयेद्दंतधावनम् ॥ ३५ ॥

इसी प्रकार तीन वार वेदपाठसे सब पाप नष्ट हो जाते हैं, आम, ढाक, बेल, चिरचिटा, शिरस इन वृक्षोंकी सवेरेंही उठकर मौन हो दतौन करे ॥ ३५ ॥

खदिरश्चकदंबश्चकरवीरकरंजकौ ॥
एतेकंटकिनःपुण्याःक्षीरिणस्तुयशस्विनः ॥ ३६ ॥

खैर, कदम्ब, कनेर, करंज, यह काँटेवाले वृक्ष पुण्यदायक हैं, क्षीरवाले यशदायक हैं ॥ ३६ ॥

तेनास्यकरणेसूक्ष्मंमाधुर्यंचैवजायते ॥
त्रिफलांलवणाक्तांवैभक्षयेच्छिष्यकःसदा ॥
क्षीणमेधाजनन्येषास्वरवर्णकरीतथा ॥ ३७ ॥

इनकी दतौनसे मुखमें सूक्ष्म मधुरता होती है, हर्ड बहेडा आमला यह सैंधानमकके साथ सदा शिष्य खाय, यह क्षीण बुद्धिवालेकी बुद्धि बढाती और स्वर तथा वर्ण करनेवाली वस्तु है ॥ ३७ ॥

स्वरहीनंतुयोधीतेमंत्रंवेदविदोविदुः ॥
यजूꣳषिनोसाधयंतिभुक्तमव्यंजनंयथा ॥ ३८ ॥

जो स्वरके विना मंत्रपाठ करते हैं, यजुष् उनके कार्य सिद्ध नहीं करसकता, ऐसा वेदज्ञ कहते हैं जैसे अव्यंजनवस्तु खाई कुछ कर्म सिद्ध नहीं करती ॥ ३८ ॥

हस्तहीनंतुयोधीतेस्वरवर्णविवर्जितम् ॥
ऋग्यजुस्सामभिर्दग्धोवियोनिमधिगच्छति ॥ ३९ ॥

जो हस्तहीन तथा स्वरवर्ण विहीन वेद पाठ करते हैं, वह ऋक् यजुष् सामसे दग्ध हुए कुयोनिमें गमन करते हैं ॥ ३९ ॥

ऋचोयजूंॅषिसामानिहस्तहीनानियःपठेत् ॥
अनृचोब्राह्मणस्तावद्यावत्स्वारंनविंदति ॥ ४० ॥

जो विना हाथोंके चलाये ऋक् यजुष् सामको पढते हैं, वह स्वरज्ञानके विना ब्राह्मण ऋचाहीन कहाता है ॥ ४० ॥

ज्ञातव्यश्चतथैवार्थोवेदानांकर्मसिद्धये ॥
पाठमात्रापपाठाच्चपंकेगौरिवसीदति ॥ ४१ ॥

इसी प्रकार क्रम वा कर्मसिद्धिके निमित्त वेदका अर्थ भी जानना चाहिये, केवल पाठ वा अशुद्धपाठसे कीचमें फँसी गौकी समान दुःखी होता है ॥ ४१ ॥

स्वरवर्णप्रयुंजानोहस्तेनाधीतमाचरन् ॥
ऋग्यजुस्सामभिःपूतोब्रह्मलोकमवाप्नुयात् ॥ ४२ ॥

जो स्वर वर्णका प्रयोग करते हस्तयुक्त वेद पढते हैं, वे ऋक् यजुष् सामसे पवित्र होकर ब्रह्मलोकको गमन करते हैं ॥ ४२ ॥

नकुर्वीतपदंदीर्घंनकुर्वीतविलंबितम् ॥
पदस्यग्रहमोक्षौचयथाशीघ्रगतिर्हयः ॥ ४३ ॥

पदको दीर्घ न करै, विलम्बमें उच्चारण न करै, पदके ग्रहण और त्यागमें शीघ्रगतिवाले अश्वकी समान आचरण करै ॥ ४३ ॥

आदरंकुरुयत्नेनकारणंहितदात्मकम् ॥
आस्येनचशयंकुर्यात्पठन्नान्यमतिर्भवेत् ॥ ४४ ॥

यत्नपूर्वक आदरसे पाठ करे, कारण कि यह कारणही तदात्मक है, मुखपर हाथ न लगाकर अनन्य मनसे पाठ करै ॥ ४४ ॥

नचास्यमुष्टिबंधीस्यान्नचात्युत्तममाचरेत् ॥
चुलुर्नौकास्फुटोदंडीस्वस्तिकोमुष्टिराकृतिः ॥
एतेवैहस्तदोषाःस्युःपरशुश्चैवसप्तमः ॥ ४५ ॥

हाथकी बहुत मुट्ठी न बांधे, न बहुत हाथ फैलावे चुल्लू नौका दण्डकी समान, स्वस्तिक ( सीधी हथेली करना ) मुष्टिकी समान आकृति करना, फरसेकी समान आकार करना, यह सात हाथके दोष हैं ॥ ४५ ॥

यथावाणीतथापाणीरिक्तंतुपरिवर्जयेत् ॥
यत्रयत्रस्थितावाणीपाणिस्तत्रैवतिष्ठति ॥ ४६ ॥

जैसी वाणी हो वैसाही हाथ हो रीता हाथ न चलावे, जहाँ जहाँ वाणी स्थित हो वहीं वहीं पाणि स्थित हो ॥ ४६ ॥

यथाधनुर्ज्यावितते शरेक्षिप्तेपुनर्गुणः ॥
स्वस्थानंप्रतिपद्येततद्वद्धस्तगतःस्वरः ॥ ४७ ॥

जैसे धनुष खैंचकर बाण छोड़नेसे डोरा फिर अपने स्थानको प्राप्त हो जाता है, इसी प्रकार हाथसे स्वर प्रक्षेप होते हैं ॥ ४७ ॥

उत्तानंसोन्नतंकिंचित्सुव्यक्तांगुलिरंजितम् ॥
स्वरविद्धंकरंकुर्यात्प्रादेशाद्देशगामिनम् ॥ ४८ ॥

ऊंचा करनेमें कुछ ऊंचा जिसमें अंगुली स्फुट सीधी रहे, इस प्रकार बारह अंगुलके मध्यमेंही गति करता हुआ हाथ स्वर बोधन करे ॥ ४८ ॥

अंगुष्ठस्योत्तरेपर्वेतर्जन्युपरियद्भवेत् ॥
प्रादेशस्यतुसोद्देशस्तन्मात्रंचालयेत्करम् ॥ ४९ ॥

अँगूठेके ऊपरके पौरुएमें तर्जनीके ऊपर पोरुएतक फैलाया हुआ हाथ प्रादेश कहाता है, इतनेही स्थानमें कर चालन करे ॥ ४९ ॥

मनुष्यतीर्थोच्चंकृत्वापितृतीर्थोदकंव्रजेत् ॥
नामितंकरपृष्ठेतुसव्यक्तांगुलिमोक्षणम् ॥ ५० ॥

उदात्तको मनुष्यतीर्थसे उच्च करे, पितृतीर्थ [ अंगुष्ठ प्रदेशिनीके मध्यमें जैसे जल जाता है ] करपृष्ठकी समान नीचा करे जिसमें अंगुलिमोक्षण प्रगट दिखाई दे ॥ ५० ॥

स्वरितेत्र्यंगुलंविद्यान्निपातेतुषडंगुलम् ॥
उत्थानेतुनवांगुल्यमेतत्स्वारस्यलक्षणम् ॥ ५१ ॥

स्वरितमें तीन अंगुल, अनुदात्तमें छः अंगुल, उदात्तमें नौ अंगुल कर चालन करे, यह स्वरका लक्षण है ॥ ५१ ॥

अभ्यासार्थेद्रुतांवृत्तिंप्रयोगार्थेतुमध्यमाम् ॥
शिष्याणामुपदेशार्थंकुर्याद्वृत्तिंविलंबिताम् ॥ ५२ ॥

अभ्यासके निमित्त शीघ्रवृत्ति, प्रयोगके निमित्त मध्यम वृत्ति, और शिष्यके उपदेशके निमित्त विलम्बित वृत्तिका आश्रय करे ॥ ५२ ॥

ऐंद्रीतुमध्यमावृत्तिःप्राजापत्याविलंबिता ॥
अग्निमारुतयोर्वृत्तिःसर्वशास्त्रेषुनिंदिता ॥ ५३ ॥

मध्यमा वृत्तिका इन्द्र देवता, विलम्बित वृत्तिका प्राजापत्य देवता, शीघ्र गतिका अग्नि और वायु देवता है, यह वृत्ति सब शास्त्रोंमें निन्दित है ॥ ५३ ॥

मुष्ट्याकृतिर्मकारेतुनकारेतुनखाग्रतः ॥
अनुस्वारेंगुष्ठपातऊष्मांतेंगुलिमोक्षणम् ॥ ५४ ॥

मकारके उच्चारणमें मुष्टिकी आकृति, नकारके उच्चारणमें नखाग्रकी आकृति, अनुस्वारमें अंगुष्ठपात, और ऊष्माण ( शषसह ) में अंगुलि मोक्षण करे ॥ ५४ ॥

उदात्तंभ्रुविपातेनप्रचयंनोग्रएवच ॥
शेषंषडंगुलंविद्यान्निचितंतुविधीयते ॥ ५५ ॥

भौंकी ओर हाथ करके उदात्त, नासाके अग्रभागमें हाथ रखकर प्रचय स्वर उच्चारण करे, और शेष स्वरमें छः अंगुल हाथ नीचा करे ॥ ५५ ॥

षडंगुलंतुजात्यस्यहस्तस्यानुपथस्यच ॥
तच्चतुर्भागमात्रंतुहस्तस्तेनैववर्तयेत् ॥ ५६ ॥

जात्यस्वरमें छः अंगुल हाथ चले, और उसके चतुर्भागमात्र हाथसे अनुपथ स्वर वर्ते ॥ ५६ ॥

ककारांतेटकारांतेङणेचांगुलिनामयेत् ॥
पंचांगुल्यपकारेतुतकारेकुंडलाकृतिः ॥ ५७ ॥

ककारके अन्तमें टकारान्तमें ङ णके उच्चारणमें अंगुलि झुकावे, पकारमें पांचों अंगुलि मिलावे ॥ ५७ ॥

ऊर्ध्वक्षेपाच्चयोष्माचणधःक्षेपाच्चयोभवेत् ॥
एकैकामुत्सृजेद्धीरःस्वरितेतूभयंक्षिपेत् ॥ ५८ ॥

तकारके उच्चारणमें कुंडलाकार करै ऊपर हाथसे चय ऊष्मा स्वर, नीचे हाथके पातसे अनुदात्त बुद्धिमान् एकरै अंगुल उत्सृजन करै स्वरितमें दोनोंको त्यागदे ५८॥

अंगुष्ठाकुंचनंलघावनुस्वारेत्वपाᳬरसम् ॥
दीर्घेरंगेचतर्जन्याःप्रसारःपरिकीर्तितः ॥ ५९ ॥

लघु अनुस्वारमें अंगुष्ठको आकुंचन करे, यथा [ अपा ᳬ रसम् । ९०९।३] दीर्घ रंग [ अभिगृणन्तु देवा १४।४ ] में तर्जनीका प्रसार कहा है ॥ ५९ ॥

तर्जन्यंगुष्ठयोःस्पर्शेप्युदात्तंप्रतिविद्यते ॥
नीचंतुमध्यमंकुर्याच्छेषंनीचतरंक्रमात् ॥ ६० ॥

तर्जनी और अंगुष्ठके स्पर्शमें उदात्त है नीचस्वरको मध्यम और शेषको क्रमसे नीचतर करे ॥ ६० ॥

स्वरितंयद्भवेत्किंचिद्वकारसहसंयुतम् ॥
ऊष्माणंतद्विजानीयान्निक्षिपेदुभयोरपि ॥६१॥

स्वरित जो किंचित् वकारसे संयुक्त हो उसको ऊष्माणसंज्ञक जाने, उनमें वकारको द्वित्व कर दे ॥ ६१ ॥

स्वरितसंज्ञेचनिक्षिप्तेसंयोगोयत्रदृश्यते ॥
द्विमात्रिकेभवेदेकमात्रिकेतूभयंक्षिपेत् ॥ ६२ ॥

स्वरितसंज्ञक निक्षेपमें जहाँ संयोग दिखाई दे तो वह द्विमात्रिक होजाता है अर्थात् द्विमात्रिकमेंका एक क्षेप द्वित्व होजाता है, त्रिमात्रिकमें दोनोंको द्वित्व करे ॥ ६२ ॥

जात्येचस्वरितेचैववकारोयत्रदृश्यते ॥
कर्तव्यस्तूभयोःक्षेपो वायव्यइतिदर्शनम् ॥ ६३ ॥

जात्य और स्वरित होनेमें जहां वकार दिखाई दे, वहाँ दोनोंका क्षेप करे, यथा व्वायव्व्ये १९।२६ यह उदाहरण है ॥ ६३ ॥

शृंगवद्वाथवत्सस्यकुमारीकुचयुग्मवत् ॥
उभक्षेपस्वरोयत्रसविसर्गउदाहृतः ॥ ६४ ॥

बछड़ेके सींगकी समान वा कुमारीके दोनों स्तनोंकी समान दो बिन्दु विसर्ग कहाते हैं ॥ ६४ ॥

विसर्गांतस्वरोयत्रस्वरितोयत्रदृश्यते ॥
दीर्घश्चैवतुकारश्चतत्रोभक्षेपउच्यते ॥ ६५ ॥

जहाँ विसर्गान्त स्वर स्वरित दिखाई दे और वकार दीर्घ हो तो दोनोंको द्वित्व करे ॥ ६५ ॥

त्रिविधस्तुभवेदूष्माप्रचिताबलकातरा ॥
स्वरितेप्रचितांविद्यान्निपातेबलकांविदुः ॥ ६६ ॥

ऊष्मवर्ण तीन प्रकारके होते हैं, प्रचिता, बलका, तरा, स्वरितमें प्रचित और निपातमें बलका ॥ ६६ ॥

उत्थानेतुतथातारा एताभिस्त्रिभिरूष्मभिः ॥
मात्रामात्रांविदित्वातुततःक्षेपंप्रयोजयेत् ॥ ६७ ॥

उत्थानमें तारा, इस प्रकार तीन ऊष्माणोंकी मात्रासे मात्राको जानकर द्वित्व करै ॥ ६७ ॥

अक्षरंभजतेंकाचित्काचिद्द्वित्वेप्रतिष्ठितम् ॥
समानेजातिकाकाचित्काचिदूष्माप्रदायिका ॥ ६८ ॥

कोई अक्षरको भजते, और कोई द्वित्वमें प्रतिष्ठा मानते हैं, कोई समान जातिका और कोई ऊष्माप्रदायिका है ॥ ६८ ॥

यथाबालस्यसर्पस्यउच्छ्वासोलघुचेतसः ॥
एवमूष्माप्रयोक्तव्याहकारःपरिवर्जितः ॥ ६९ ॥

जैसे बाल सर्पका लघुचित्तसे उच्छ्वास होता है, इसप्रकारसे हकारको छोड़कर शषस ऊष्माणोंका प्रयोग करै ॥ ६९ ॥

विवृत्तिप्रत्ययादूष्मांप्रवदंतिमनीषिणः ॥
तामेवप्रतिषेधंति आई ऊए निदर्शनम् ॥ ७० ॥

बुद्धिमान् विवारकी प्रतीतिसे ऊष्माको जानते हैं, कहीं नहीं भी होती, यथा आ ई ऊ ए ॥ ७० ॥

अष्टौस्वरान्प्रवक्ष्यामि तेषामेवतुलक्षणम् ॥
जात्योभिनिहितःक्षैप्रःप्रश्लिष्टश्चतथापरः ॥ ७१ ॥

आठ स्वर और उनके लक्षण कहता हूँ, जात्य, अभिनिहित, क्षैप्र, प्रश्लिष्ट ॥ ७१ ॥

तैरोव्यञ्जनसञ्ज्ञश्चतथातैरोविरामकः ॥
पादवृत्तोभवेत्तद्वत्ताथाभाव्यइतिस्वराः ॥ ७२ ॥

तैरोव्यंजन, तैरोविरामक, पादवृत्त और ताथाभाव्य, एक पदमें प्रथमका अक्षर अनुदात्त हो उसके अनन्तर यकार वकार हो तो वह जात्य स्वर है अथवा अपूर्वक य, व, जात्य स्वर होते हैं ॥ ७२ ॥

एकपदेनीचपूर्वःसयवोजात्यइष्यते ॥ अपूर्वोपिपरस्तद्व-द्धान्यंकन्यास्वरित्यपि ॥ एकपद इत्याह ॥ नीचपूर्वः सयकारवकारौ वा जात्यः स्वरितो भवति ॥ यथाजात्यं मनुष्यानिति । सुष्वेति । चम्वीव । धान्यम् । कन्याइव

स्वः । वीर्यम् । एवं ह्याह यानिचान्यानीदृग्लक्षणानि प-
दानि भवंति । एओआभ्यामुदात्ताभ्यामकारोरिफितश्चयः॥
अकारोयत्रलुप्येततंचाभिनिहितंविदुः ॥ ७३ ॥

यथा मनुष्यान् १।३१ पदपाठे । सुप्वेति १। ३ चम्वीवेति २० । ७० धान्यम् १।२० कन्या इव १७।१७ स्वः १८। ६४ वीर्यम् १२ । ९४ इसी प्रकारके इन लक्षणोंके औरभी पद जानने, ए ओ इन उदात्त स्वरोंमें जहां अकार रेफके साथ अकारका लोप होजाय उसे अभिनिहित कहते हैं ॥ ७३ ॥

यथा कुक्कुटः+असि । कुक्कुटोसि १ । १६ । वेदः+असि ।
वेदोसि २ ।२१ भागः+असि । भागोसि ।६।१६मारुतः+
असि । मारुतोसि । १८।४५ श्वात्रः+असि । श्वात्रोसि ।
५।३१ । ते+अप्सरसाम्।तेप्सरसाम् २४।३७ ते+अवंतु ।
तेऽवन्तु १९।१७। कः+असि । कोसि ७।२९। सः+अहम् ।
सोहम् । १८।३५ एवꣳहियानिचान्यानिईदृग्लक्षणानि-
पदानिभवंति । इउवर्णौयदोदात्तावापद्येतेयवौक्वचित् ॥
अनुदात्तेपदेनित्यंविद्यात्क्षैप्रस्यलक्षणम् ॥ ७४ ॥

जैसे कुक्कुटः+असि=कुक्कुटोसि १।१६। वेदः+असि=वेदोसि २।१ इत्यादि । इसी भाँति और भी इन लक्षणोंवाले पद जानने । इ उ वर्ण उदात्त होकर कहीं तो नित्य अनुदात्त पदमें स्थित होनेसे उन्हें क्षैप्र द्वित्व जानै ॥ ७४ ॥

यथा त्रि+अंबकम् । त्र्यंबकम् ३ । ६० । द्रु+अन्नः । द्रुन्नः ११
।७० वीडु+अंगः । वीड्वङ्गः २९।५१ वाजी+अर्वन्। वाज्य-
र्वन् ११ । ४४ एवꣳह्याह यानि० भवंति ॥ इकारोयत्रदृश्येत
इकारेणैवसंयुतः॥ उदात्तश्चानुदात्तेन प्रश्लिष्टोभवतिस्वरः॥७५॥

---

१ यह चिह्न वह है कि, यह उदाहरण यजुर्संहिताके अमुकअध्यायके अमुक मंत्रमें है आगे भी इसी प्रकार जानो ।

यथा त्रि+अम्बकम्–त्र्यम्बकम् ३।६० इत्यादि इसी प्रकार और पद जानने, जहाँ इकार इकारहीसे संयुक्त दीखे वह उदात्त अनुदात्तसे युक्त प्रश्लिष्ट स्वर होता है ॥ ७५ ॥

अभि+इन्धताम्। अभीन्धताम् ११।६१। अभि+इमम्। अभीमम् ३८।७। वि+इहि। व्वीहि १२।२७। स्रुचि+इव। स्रुचीव। चम्वी+इव। चम्वीवेति। एवꣳह्याह यानिचान्यानि उदात्तपूर्वंयत्किंचिच्छंदसिस्वरितंपदम् ॥ एषसर्वंबहुस्वारस्तैरोव्यंजनउच्यते ॥ ७६ ॥

यथा अभि+इन्धताम्=अभीन्धताम् इत्यादि इसीप्रकार औरभी पद जानने छन्दमें जो उदात्तपूर्वक कोई पद हो वह सब बहुत स्वरवाला तैरोव्यंजन कहाता है ॥ ७६ ॥

इडे २।९। रन्ते। हव्ये। काम्ये। चंद्रे। ज्योते। अदिति। सरस्वती। महि। विश्रुतीतिभवंति। एवꣳह्याहयानि० भवंति ॥ अवग्रहात्परोयस्तुस्वरितःस्यादनंतरम् ॥ तैरोविरामंतं विद्यादुदात्तोयद्यवग्रहः ॥ ७७ ॥

यथा इडे, रन्ते, इत्यादि इसप्रकार औरभी जाने, उदात्त अवग्रह स्वरसे परे जो स्वरित हो तो उसको तैरोविराम जाने और उसके विपरीत तैरोव्यंजन होता है ॥ ७७ ॥

यथा गोमदिति गो+मत् २०।८१ गोपताविति गो+पतौ १।१ प्रप्रेति प्र+ प्र १२।३०। वितततेति वि+तता २९।४० तातेति ता+ता २९।४०। समिद्धइति सम्+इद्धः।२०।१ पदपाठे एव ꣳह्याहयानि० भवंति॥ स्वरेति स्वरितेचैवविवृतिर्यत्रदृश्यते। पादवृत्तोभवेत्स्वारः श्वित्रआदित्येतिनिदर्शनम् ॥ श्वित्रः+ आदित्यानाम् ॥ श्वित्र आदित्यानाम् २४।३९। पुत्रः+ईधे।

१ तैरोव्यञ्जनमन्यथा इति वा पाठः।

२ स्वरयोरन्तरे काले इति वा पाठः।

पुत्र ईधे ११ । २२ । दात्रे+एधि । दात्रएधि । कः+ईम् । कईम् ३३ । ५९ ताः+अस्य। ताअस्य। एवꣳह्याहयानि॰भवन्ति॥ उदात्ताक्षरयोर्मध्येभवेन्नीचस्त्ववग्रहः ॥ तथाभाव्यंभवेत्कंपस्त नूनप्त्रेतिनिदर्शनम् ॥ ७८ ॥

यथा तनूनप्त्र इतितनू+नप्त्रे९।५ तनूनपादितितनू+नपात् २१ । १० तनूनपातमिति तनू+नपातम् २८ । २ । एवꣳ ह्याहयानिपदानिलक्षणानिभवंति ॥ इत्यष्टपदसमाम्नायेवै-शेषिकेयाज्ञवल्क्यवचनानांपदानांपाठःसमाप्तः ॥

यथा गोमदिति गो + मत् इत्यादि इसी प्रकार और भी जाने । स्वर और स्वरित इन दोनोंके मध्यमें जहाँ विवृत स्वर दिखाई दे, वह स्वर पादवृत्त होता है, यथा श्वित्रः + आदित्यानाम्=श्वित्रऽआदित्यानाम् इत्यादि । जहाँ उदात्त अक्षरके बीचमें अनुदात्त अवग्रह हो वह तथाभाव्यस्वर कहाता है, तनूनप्त्रे यह दृष्टान्त है ॥ ७८ ॥

यथा तनूनप्त्र इति तनु+नप्त्र इत्यादि इसीप्रकार इस लक्षणके औरभी पद जानने । इत्यष्टपदसमाम्नाये वैशेषिके याज्ञवल्क्यवचनानां पदानां पाठः समाप्तः ॥

माध्यंदिनविरोधिःस्यात्तथाभाव्यस्तुयःस्मृतः ॥
स्वरोनैवात्रदृश्येतभिन्नोदात्तानुदात्तकौ ॥ १ ॥

माध्यन्दिन विरोधी तथाभाव्य इसमें नहीं देखा जाता कारण कि इसमें उदात्त अनुदात्तसे रहित स्वर नहीं देखा जाता ॥ १ ॥

स्वराःस्पर्शांतःस्थोष्माणः॥ कंठ्य। जिह्वामूलीय । तालव्य। मूर्धन्य। दंत्य । ओष्ठ्य । यमा विसर्जनीयनिपाताद्याश्चकिंव वर्णदैवत्यलिंगाः स्वराः शुक्लाः नानादैवत्याः। स्पर्शाः कृष्णाः। कपिला अंतस्थाः । ऊष्माणोऽरुणाः । नीला यमाः । हरिता नासिक्याः । पीतोनुस्वारः । रक्तोजिह्वामूलीयः । पीतउपध्मा-नीयः । श्वेतोविसर्जनीयः । शबलो रंगः । अतिनीलोनुनासि-क्यः । इत्यंतर्मध्यमयोर्नासिक्यंविद्यात् ॥ द्विरुदात्ताख्याइति

१ इमान्युदाहरणानि संहितापदयोर्ज्ञातव्यानीति ।

स्मृताः ॥ उदमनुदनिपाते आद्येचोपसर्गेनामाख्यातेचोपसर्गनिपाताश्चेति। किंदैवत्याः। अक्षराणांचकेपुरुषाः। काःस्त्रियः। कानि नपुंसकानि इत्यत्रब्रूमः। कंठ्याआग्नेयाः अकारादयः॥ जिह्वामूलीया नैर्ऋत्याः ककारादयः। तालव्याः सौम्याः चकारादयः। वायव्या मूर्धन्याष्टकारादयः। रौद्रा दंत्याः तकारादयः। औष्ठ्या आश्विन्याः पकारादयः॥ शेषा वैश्वदेवाः अम् इत्येवमादयः। स्वरास्तुब्राह्मणाज्ञेयावर्गाणां प्रथमाश्चये। द्वितीयाश्चतृतीयाश्चचतुर्थाश्चापिभूमिपाः॥२॥

स्वर, स्पर्श, अन्तःस्थ, ऊष्माण, कण्ठस्थानीय, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय, तालुस्थानीय, मूर्धास्थानीय, दन्तस्थानीय, ओष्ठस्थानीय, यम, विसर्ग, निपात, कौनकौनसे वर्ण, किसकिस देवता लिंगवाले हैं सो कहते हैं, उनमें स्वर शुक्लवर्ण नानादेवतावाले हैं, स्पर्श ( कसे म तक ) कृष्ण वर्ण हैं, अन्तस्थ ( यरलव ) कपिलवर्ण, ऊष्माण ( शषसह ) अरुण वर्ण हैं, यम ( वर्गोंके पहले चारके आगे पांचवां परे होनेपर मध्यमें पूर्वसदृश वर्ण ) नीलवर्ण नासिकास्थानीय अनुनासिक ( ङ ञ ण न म ) हरित वर्ण हैं, अनुस्वार पीतवर्ण जिह्वामूलीय ᳵ क ᳵ ख रक्तवर्ण, उपध्मानीय ᳶ प ᳶ फ पीतवर्ण विसर्ग श्वेत वर्ण रंग शवल ( कबरारंग ) अनुनासिक अतिनीलवर्ण इसी प्रकार स्वर और अन्तस्थके मध्यमें वर्णान्तको अनुनासिक जानै द्वि उदात्त हैं। उत् निपात ( एक अक्षरवाले ) उपसर्गके आदिके उपसर्ग और निपात यह किन देवताओंवाले हैं, इन अक्षरोंमें कौन स्त्री और कौन पुरुष है, कौन नपुंसक है, सो कहते हैं, कण्ठ्यवर्ण अकारादि अग्नि देवतावाले हैं, तालुस्थानवाले चकारादि चन्द्रदेवतावाले हैं, मूर्धास्थानवाले टकरादि वायुदेवतावाले हैं, दन्तस्थानवाले तकारादि रुद्रदेवतावाले हैं, ओष्ठस्थानीय पकारादि अश्विनीदेवतावाले हैं, अं इत्यादि शेषवर्ण विश्वेदेवादेवतावाले हैं, स्वर वर्ण ब्राह्मण हैं, तथा वर्गोंके प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ अक्षर क्षत्रियवर्ण हैं॥ २ ॥

वर्गाणांपंचमावैश्याअंतस्थाश्चतथैवच।<br>
ऊष्माणश्चहकारश्चशूद्राएवप्रकीर्तिताः॥ ३ ॥

वर्गोंके पांचवें अक्षर और अन्तस्थ शूद्र वर्ण हैं, ऊष्माण और हकार यह शूद्र कहाते हैं॥ ३ ॥

शुक्लवर्णानिनामानिआख्यातारोहितासताः॥<br>
कपिंजलास्तूपसर्गाःकृष्णाश्चैवनिपातकाः॥ ४ ॥

नामिक शुक्ल वर्ण है, आख्यात ( क्रिया ) रक्तवर्ण उपसर्ग कपिंजल वर्ण, और निपात कृष्णवर्ण हैं ॥ ४ ॥

भार्गवगोत्राणिनामानि भारद्वाजा आख्याताः ।
वासिष्ठाउपसर्गास्तु निपाताःकाश्यपाःस्मृताः ॥
पीतवर्णश्चोपसर्गो निपातःकृष्णवर्णकः ॥
सर्वंतुसौम्यमाख्यातं नामवायव्यंदृश्यते ॥
अग्नियस्तूपसर्गःस्यान्निपातोवारुणःस्मृतः ॥ ५ ॥

नामिक भार्गवगोत्र, आख्यात भारद्वाज गोत्र हैं, उपसर्ग वासिष्ठ गोत्र, और निपात कश्यपगोत्रवाले हैं, उपसर्ग पीत और निपात कृष्ण वर्ण हैं, सब आख्यात चन्द्र देवतावाले, सब नामिक वायुदेवता वाले हैं, उपसर्गोंका अग्नि निपातका वरुण देवता है ॥ ५ ॥

प्रथमाश्चतथांतस्थाः स्त्रीलिंगाःपरिकीर्तिताः ॥
शेषाक्षराणिषंढानिप्राहुर्लिंगविवेचकाः ॥ ६ ॥

प्रथम स्वर और अन्तस्थवर्ण स्त्रीलिंग हैं, शेष अक्षर नपुंसक हैं ऐसा लिंगज्ञाता कहते हैं ॥ ६ ॥

नाम्नामिंद्रोदेवतावरुणःउपसर्गाणामादित्यःसर्वस्याक्षरगणस्य स्वरा विसर्जनीयोयमाश्चपुँलिंगाः[१] । ङञणनमायरलवाःस्त्रीलिंगाः । शेषाण्यक्षराणिनपुंसकलिंगानीति ॥ संधिश्चतुर्विधोभवतीति ॥ लोपागमौ वर्णविकारः प्रकृतिभावश्चेति । तद्यथा तत्रलोपोभवति अयक्ष्माः+मा अयक्ष्मामा १ । १ । शततेजाः+वायुः शततेजाव्वायुः १ । २४ । तिग्मतेजाः+द्विषतः । तिग्मतेजाद्विषतः १ । २४ इतिलोपः ॥ आगमोभवति यथा प्रत्यङ्सोमःप्रत्यक्सोमः १० । ३९ प्राक्सोमः प्राङ्सोमः १९ । २ अस्मान् सीते अस्मान्त्सीते १२ । ६१ त्रीन् समुद्रान् त्रीन्त्समुद्रान् १३।३० इतिआगमः ॥ विकारोभवति आ+इदम् एदम् ४ । १ आ+इमे एमे ९ । १८ आ+इष्टयः एष्टयः १८ । ४१ प्र+इषितः प्रेषितः २१ । ५७ इतिविकारः ॥

---

[१] आदित्यो मुनिभिः प्रोक्तः सर्वाक्षरगणस्य च । स्वराविसर्जनीयाश्च यमाःपुँल्लिङ्गकाःस्मृताः इति वा पाठः ।

प्रकृतिभावो यथा,आशुः शिशानः। युञ्जानःप्रथमम्। अदितिःषोडशाक्षरेण ९। ३४। देवोवःसविता १।१ इतिप्रकृतिभावः॥ आकाशस्थायथाविद्युत्स्फुटितामणिसूत्रवत्॥ एषच्छेदोविवृत्तीनांयथावालेषुकर्तरी॥ ७॥

नामिकका इन्द्र, उपसर्गोका वरुण और सब अक्षरोंका सूर्य है, स्वर विसर्ग और यम पुँल्लिंग हैं, ङ, ञ, ण, न, म, थ, र, ल, व, यह स्त्रीलिंग हैं शेष अक्षर नपुंसकलिंग हैं, संधि चार प्रकारकी होती है लोप, आगम, वर्णविकार, और प्रकृतिभाव, उनमें लोप जैसे अयक्ष्माः+मा=अयक्ष्मामा इसमें विसर्गोका लोप हुआ है इत्यादि। आगम जैसे प्रत्यङ्+सोमः=प्रत्यङ्क्सोमः यहां ककारका आगम हुआ इत्यादि, विकार जैसे आ+इदम्=एदम् इत्यादि यहां आ+ इ के स्थानमें ए विकार हुआ, प्रकृतिभाव जैसे आशुःशिशानः इत्यादिमें ज्योंका त्यों रहगया आकाशमें जैसे बिजली मणिसूत्रवत् स्फुरायमाण होती है, इसीप्रकारसे विवृत्तिका छेद होना चाहिये जैसे वालोंमें कैंची॥ ७॥

द्वयोस्तुस्वरयोर्मध्येसंधिर्यत्रनदृश्यते॥
विवृत्तिस्तत्रविज्ञेयायऽईशेतिनिदर्शनम् २२।२॥ ८॥

दो स्वरोंके मध्यमें जहां संधि न दीखे वहां विवृत्ति जाननी, जैसे य ईशः॥८॥

पिपीलिकापाकवतीतथावत्सानुसारिणी॥
वत्सानुसंसृताचैवचतस्रस्तुविवृत्तयः॥ ९॥

विवृत्ति चार प्रकारकी होती है पिपीलिका, पाकवती, वत्सानुसारिणी, वत्सानुसंसृता॥ ९॥

पंचरंगाः प्रवर्ततेघातनिर्घातवज्रिणः॥
अहरप्रहरोज्ञेयअइउऋओइतिनिदर्शनम्॥ १०॥

घात, निर्घात, वज्री, अहर, प्रहर यह पांच रंग हैं जैसे अ इ उ ऋ ओ यह निदर्शन है॥ १०॥

पिपीलिकाआद्यंतदीर्घानाभ्याऽआसीदितिनिदर्शनम्३१।१।१३
पाकवत्युभयोर्ह्रस्वाविनऽइन्द्रेतिनिदर्शनम्॥ ११॥

आदि और अन्तमें दीर्घवाली पिपीलिका विवृत्ति कहाती है,यथा नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षम् इत्यादि। आदि अन्तमें ह्रस्वपाकवती विवृत्ति होती है,यथा विनऽइन्द्र इत्यादि॥ ११॥

अंतेचवत्सानुसृजितातानऽआवोढमश्विनेतिनि० २० । ७४
वत्सानुसारिणीचादौदीर्घाताऽअस्येतिनि०॥ १२ ॥

अन्तमें दीर्घ वत्सानुसृजिता होती है,तानऽआवोढमश्विना यह उदाहरण है और आदिमें दीर्घ होवे वत्सानुसारिणी होती है ताऽअस्य यह उदाहरण है ॥ १२ ॥

करिणीकुर्विणीचैवहरिणीहारिणीतिच ॥
तथाहंसपदानामपंचैताःस्वरभक्तयः ॥ १३ ॥

करिणी, कुर्विणी, हरिणी, हारिणी और हंसपदा यह पांच स्वरभक्ति हैं ॥ १३॥

करिणीरहयोर्योगेकुर्विणीलहकारयोः ॥
हरिणीरषयोर्योगेहारितालऋपकारयोः ॥ १४ ॥

र, ह के योगमें करिणी,लकार हकारके योगमें कुर्विणी,र, ष के योगमें हरिणी, ऋ, षकारके योगमें व ल, षकारके योगमें हारिता ॥ १४ ॥

यातुहंसपदानामसातुरेफषकारयोः ॥ १५ ॥

र, ष के योगमें हंसपदा भक्ति होती है ॥ १५ ॥

देवंबर्हि २१।४४ रितिकारिणीउपवल्हेतिकुर्विणी २३ । ४६
हरिणी[1] ११।३६ मरेषंसइत्याहुर्हारिणीशतवल्शेतिच॥१६॥

देवंबर्हिं यह करिणी, उपवल्हेति यह कुर्विणी, दर्शतमिति यह हरिणी, शतवल्शेति यह हारिणी ॥ १६ ॥

व्वर्षोवर्षीयसीत्याहुस्तथाहंसपदेतिच ६ । ११॥ रलाभ्यांपरऊष्माणोयत्रस्युः स्वरितोदयाः ॥ स्वरभक्तिरसौज्ञेयापूर्वमाक्रम्य पठ्यते ॥ स्वरभक्तिंप्रयुंजानस्त्रीन्दोषान्परिवर्जयेत् ॥ १७ ॥

वर्षोवर्षीयसि यह हंसपदा भक्तिका उदाहरण है । र, ल से परे जहां ऊष्माण स्वरितोदय हो इसको स्वरभक्ति जानना,यह पूर्वको आक्रमण कर पढ़ी जातीहै,भक्ति प्रयोगके तीन दोषोंको त्याग करै ॥ १७ ॥

इकारंचाप्युकारंचग्रस्तदोषंतथैवच ॥
एतल्लक्षणमाख्यातंयाज्ञवल्क्येनधीमता ॥ १८ ॥

इकार उकार और ग्रस्तदोष इनका लक्षण बुद्धिमान् याज्ञवल्क्यने कथन किया है ॥ १८ ॥

सम्यक्पाठस्यसिद्ध्यर्थंशिष्याणांहितकाम्यया ॥

---

[1] हरिणी दर्शतमिति ११ । १६ शतवल्शेति हरिता ५ । ४५

अर्धमात्रास्वरंकिंचित्पृथङ्न्यूनमिवोच्चरन् ॥
ऋकारेहकारहृत्कंठमनसानिच ॥ १९ ॥

भलीप्रकार पाठकी सिद्धि और शिष्योंके हितकी कामनासे कहा है, अर्धमात्राका स्वर कुछ पृथक् न्यून उच्चारण करै, ऋकार हकारको हृदय कंठ और मनसे उच्चारणकरै ॥ १९ ॥

नैतत्स्वारितपूर्वांगेनापरांगेकथंचन ॥
नस्वरेनचमात्रायांकथंस्वारोविधीयते ॥ २० ॥

यदि कहो कि यह स्वरित पूर्वांग परांग स्वर और मात्रामें जब नहीं तो कैसे स्वरका विधान किया जाय ॥ २० ॥

परांगस्यतुयत्पूर्वंपूर्वांगस्यतुयत्परम् ॥
उभयोरर्द्धसंयोगेस्वारंकुर्याद्विचक्षणः ॥ २१ ॥
संयोगेतुपरंस्वार्य्यंपरंसंयोगनायकम् ॥
संयुक्तस्यतुवर्णस्यनस्वार्य्यंपूर्वमक्षरम् ॥ २२ ॥

संयोगमें यह स्वर पर और परसंयोगमें नायक कहाता है ऐसा जाना. संयुक्त वर्णका पूर्व अक्षर स्वर नहीं होता ॥ २१ ॥ २२ ॥

उदात्तादनुदात्तेतुवामायाभ्रुवआरभेत् ॥
उदात्तात्स्वारितोदात्तौक्रमाद्दक्षिणतोन्यसेत् ॥२३॥

अनुदात्तमें उदात्त इसको वामभ्रूसे आरंभ करे उदात्तसे स्वरित उदात्तको क्रमसे दक्षिणको लावे ॥ २३ ॥

स्वारितादनुदात्तायेप्रचयस्तान्प्रचक्षते ॥
एकस्वरानपिचतानाहुस्तत्त्वार्थचिन्तकाः ॥ २४ ॥

स्वरितसे उत्तरमें अनुदात्त हो तो उसको तत्त्वज्ञाता प्रचय स्वर कहते हैं, अथवा एकस्वर भी कहते हैं ॥ २४ ॥

प्रचयोयत्रदृश्येततत्रहन्यात्स्वरंबुधः ॥
स्वरितःकेवलोयत्रमृदुस्तत्रनिपातयेत् ॥ २५ ॥

जहां प्रचय दिखाई दे बुद्धिमान् वहां स्वरभंग करै और जहां केवल स्वरित हो वहां मृदु निपातन करे ॥ २५ ॥

दुर्बलस्ययथाराष्ट्रंहरतेबलवान्नृपः ॥
एवंव्यंजनमासाद्य अकारोहरतेस्वरम् ॥ २६ ॥

जैसे बली राजा दुर्बल के राज्यको हरते हैं इसी प्रकार व्यंजनको प्राप्त होकर अकार स्वरको हरणकरता है ॥ २६ ॥

उच्चादुच्चतरंनास्तिनीचान्नीचतरंतथा ॥
अक्षरात्तुल्ययोगाच्चनीचेनीचगतानिच ॥ २७ ॥

उच्चसे उच्च और नीचसे नीच नहीं होता, अक्षर तुल्य योगवाले हैं नीच स्वरको प्राप्त होकर नीचे हो जाते हैं ॥ २७ ॥

स्वरउच्चःस्वरोनीचःस्वरःस्वारितएवच ॥
स्वरप्रधानैस्तैःस्वार्यंव्यंजनंतेनसस्वरम् ॥ २८ ॥

स्वरही उच्च स्वर अनुदात्त और स्वरही स्वरित होता है, स्वरही स्वरमें प्रधान है उसीसे व्यंजन स्वरवाला कहाता है ॥ २८ ॥

व्यंजनान्यनुवर्तंतेयत्रतिष्ठतिसस्वरः ॥
स्वरप्रधानंत्रैस्वर्यमाचार्याःप्रवदंतिहि ॥ २९ ॥

स्वरकी ओरही व्यंजन अपनी अनुवृत्ति करते हैं, इन तीनोंमें स्वरही प्रधान है यह आचार्य कहते हैं ॥ २९ ॥

मणिवद्व्यंजनंविद्यात्सूत्रवच्चस्वरंविदुः ॥
आचार्याःसममिच्छंतिपदच्छेदंतुपंडिताः ॥ ३० ॥

मणिकी समान व्यंजन और सूत्रकी समान स्वर है,आचार्य समकी और पंडित पदच्छेदकी इच्छा करते हैं ॥ ३० ॥

स्त्रियोमधुरमिच्छंतिविकृष्टमितरेजनाः ॥
उदात्तंनानुवर्तंतेनीचंनस्वरितंतथा ॥ ३१ ॥

स्त्री मधुर पदार्थकी और दूसरे जन अव्यक्त शब्दकी इच्छा करते हैं, जो उदात्त अनुदात्त और स्वरितका अनुवर्तन नहीं करते ॥ ३१ ॥

विस्वरंतंविजानीयाद्दीर्घह्रस्वविवर्जितम् ॥ हरिवरुणवरेण्येषुधारा हिपुरुषेषुच ॥ वैश्वानरोनकारे १८।७२ चशेषास्तुस्वरितानराः ।

( स्वरितोरेफवैश्वानरोनकारः शेषाकारःस्वरितानराः ) ॥ ३२ ॥

ह्रस्व दीर्घसे वर्जित उसको विस्वर जाने, हरि, वरुण, वरेण्य, धारा, पुरुष इनमें रेफ स्वरितत्वके समान आचरण करता है, वैश्वानर शब्दमें नकार स्वरितत्वकी समान आचरण करता है और नर शब्दमें रेफकोही स्वरित्व होता है ॥ ३२ ॥

द्वौवरुणौचस्वरितौ उदुत्तमं १२। २ त्वंव्वरुण ३३ । ३२ ॥

धारेचैवोरुधारे तु पुरुधारेच दोहने॥मात्रिकंवाद्विमात्रंवास्वरितं यदिहाक्षरम् ॥ तस्यादितोर्द्धमात्रावैशेषंचपरतोभवेत् ॥ ३३ ॥

उदुत्तमं त्वं व्वरुण इनमें वरुण शब्दके दो वकारोंमें का एक वकारही स्वरितवत् होता है रेफ नहीं, ऊरुधारा इत्यादिमें धा शब्दही स्वरितवत् होता है, एक मात्रा वा दो मात्राका जो अक्षर स्वरित हो तो द्विमात्रिकमें आधी मात्रा उदात्त आधी अनुदात्त शेष स्वरित होता है "यह पाणिनिसे विलक्षण है" ॥ ३३ ॥

नकारांतेपदेपूर्वेश्मश्रुभिः २५।१ परतः स्थिते ॥
छकारंनप्रयुंजीतञशसंधिसमुच्चरेत् ॥ ३४ ॥

नकारान्त पदके आगे यदि श्मश्रु शब्द हो तो शकारको छकारका प्रयोग न करै ञ और शकी सन्धि करै ॥ ३४ ॥

ओकारः २ । १३ प्लुतविज्ञेयः प्लुतमग्राद्वितीयकम् ८।१०॥ लाजीञ्छाची २३।८ तृतीयंचविवेशेति २३।४९ चतुर्थकम् ३५

ओकार प्लुत जानना यथा अग्ना द्वितीयकम् लाजीञ्छाची तीसरा और विवेशेति यह चौथा प्रयोग है ॥ ३५ ॥

अधश्स्विदासी २३ । ७४ त्पंचमंचोपरिस्विदासीच्चषष्ठकम् ॥ सप्तमंतुक्ष्विबेस्मारअष्टमंनैवविद्यते ॥ ऌकारस्यतुदीर्घत्वंनास्ति वाजसनेयिनः ॥ ३६ ॥

अधःस्विदासीत् पांचवां और उपरि स्विदासीत् छठा प्रयोग है, सातवाँक्ष्विबे स्मार और आठवां प्रयोग नहीं है वाजसनेयी शाखावालोंके मतमें ऌकारका दीर्घ नहीं है ॥ ३६ ॥

उच्चस्तानागतेहस्तेस्वरितंनोपपद्यते ॥
अधस्थात्तुयदागच्छेत्स्वरितंनतदाभवेत् ॥ ३७ ॥

हाथके उदात्त मार्गमें प्राप्त होनेसे स्वरित प्रगट नहीं होता, और जब अनुदात्तपनको प्राप्त हो तो स्वरित नहीं होता ॥ ३७ ॥

कचटतपाहश्यंतेसंधिस्थानेषुनित्यशः ॥
स्ववर्गेणैवसंयुक्तामोक्षंकुर्वीततत्रवै ॥ ३८ ॥

क च ट त प यह संधिस्थानमें नित्य दिखाई देते हैं, अपने वर्णवालोंसे संयुक्त होकर फिर पृथक् नहीं होते ॥ ३८ ॥

तकारांतेपदेपूर्वेसकारेपरतःस्थिते ॥
प्रत्यारंभंनकुर्वीतपापावितिनिदर्शनम् ॥ ३९ ॥

जब पूर्वमें तकारान्त पद आगे सकार स्थित हो तो प्रत्यारंभ न करै यथा पापाविति ॥ ३९ ॥

ककारांतेपदेपूर्वेसकारेपरतःस्थिते ॥
खसवर्णंविजानीयाद्भिखक्सेतिनिदर्शनम् २१।२६ ॥४०॥

ककारान्त पद पूर्वमें और आगे सकार हो तो खसवर्ण जानै यथा भिखक्सेन इति ॥ ४० ॥

तकारांतेपदेपूर्वेचवर्गेपरतःस्थिते ॥
मोक्षंतत्रापिकुर्वीत यच्चशेपेनिदर्शनम् ६ । १७ ॥ ४१ ॥

नकारान्त पद पूर्वमें आगे चवर्ग स्थित हो तो वहां वर्ण मोक्ष करै यथा यच्च शेपे यह दृष्टान्त है ॥ ४१ ॥

ङकारांतेपदेपूर्वे सकारेपरतःस्थिते ॥
कसवर्णंविजानीयात्प्राङ्क्सोमेतिनिदर्शनम् १८।३॥४२॥

पूर्वमें ङकारान्त पद हो आगे सकार स्थित हो तो उसका सवर्णी 'क' जाना, प्राङ्क्सोमः यह उदाहरण है ॥ ४२ ॥

टकारांतेपदेपूर्वेसकारेपरतः स्थिते ॥
टसवर्णंविजानीयात्सम्राट्संभृतेतिनिदर्शनम्३९।४॥४३॥

जो पूर्वमें टकारान्त पद हो आगे सकार स्थित हो तो टकार सवर्णी हो यथा सम्राट् संभृत इति ॥ ४३ ॥

तकारांतेपदेपूर्वेसकारेपरतःस्थिते ॥
थसवर्णंविजानीयात्तत्सवितुर्निदर्शनम् ३ । ३५ ॥४४॥

तकारान्त पद पूर्वमें हो आगे सकार हो तो 'थ' का सवर्णी हो तत्सवितु० यह उदाहरण है ॥ ४४ ॥

नकारांतेपदेपूर्वेसकारेपरतःस्थिते ॥
तसवर्णंविजानीयात्त्रीन्त्समुद्रेतिनिदर्शनम्१३।३२।४५

---

१ नैतन्माध्यन्दिनीयानां संस्थानत्वात्तयोर्द्वयोः ।
स्स्थानेपि द्वितीयं स्यादायस्तस्मस्य यत्मतम् ॥ इत्यधिकः पाठः ।

नकारान्त पद पूर्वमें हो सकार आगे हो तो त सवर्णी हो, यथा त्रीन्त्समुद्रान् यह उदाहरण है ॥ ४५ ॥

पकारांतेपदेपूर्वे शकारेपरतःस्थिते ॥
फसवर्णविजानीयादनुष्टुप्छारदीतिनिदर्शनम् १३।५७॥४६॥

पकारान्त पद पूर्वमें हो आगे शकार हो तो फ सवर्णी जाने अनुष्टुप् शारदी यह उदाहरण है ॥ ४६ ॥

मकारांतेपदेपूर्वेसवर्णेपरतःस्थिते ॥
मसवर्णविजानीयादिमम्मेतिनिदर्शनम् २१।१ ॥ ४७॥

मकारान्त पदके आगे सकार हो तो सवर्णी मकार हो 'इमम्मे' यह उदाहरण है ॥ ४७ ॥

वर्णेतुमात्रिकेपूर्वेअनुस्वारोद्विमात्रिकः ॥
द्विमात्रेमात्रिकोज्ञेयः संयोगाद्यश्चयोभवेत् ॥ ४८ ॥

एक मात्रावाले वर्णके आगे द्विमात्रिक अनुस्वार हो तो द्विमात्रिक द्विमात्रावाला जानो, जिसका जो संयोग हो ॥ ४८ ॥

अनुस्वारोद्विमात्रःस्यादृवर्णव्यंजनादिगः ॥
ह्रस्वाद्वायदिवादीर्घाद्देवानांहृदयेभ्यइतिनि० ।१६।४६।४९

अनुस्वार दो मात्रावाला हो ऋवर्ण व्यंजनके पूर्वमें प्राप्त हुआ हो तो द्विमात्रिक होता है, ह्रस्व वा दीर्घ चाहे किसीसे परे हो देवानां हृदयेभ्यः यह उदाहरणहै ॥४९॥

अनुस्वारस्योपरिष्टात्संवृतंयत्रदृश्यते ।
दीर्घंतंतुविजानीयाच्छ्रोताग्रावाणेतिनिदर्शनम् ६।२६॥५०॥

अनुस्वारके आगे यदि संवृत प्रयत्नवाला वर्ण दीखे तो उसे दीर्घ जाने, श्रोता ग्रावाणः यह उदाहरण हैं ॥ ५० ॥

अनुस्वारस्योपरिष्टात्संयोगोयत्रदृश्यते ॥
ह्रस्वंतंतुविजानीयात्सर्ठंस्थेतिनिदर्शनम् ॥ २९ । २९ ॥५१॥

अनुस्वारके ऊपर जहां संयोग दीखै उसे ह्रस्व जानै सर्ठंस्था यह दृष्टान्त है॥५१॥

अनुस्वारश्चयोदीर्घादक्षराद्योभवेत्परः ॥
सतुह्रस्वइतिज्ञेयोमंत्रेष्वेव विभाषया ॥ ५२ ॥

दीर्घ अक्षरसे परे जो अनुस्वार हो, वह विकल्प करके मंत्रोंमें ह्रस्व होता है॥५२॥

ओभावश्चविवृत्तिश्चशषसारेफएवच ॥
जिह्वामूलमुपध्माचगतिरष्टविधोष्मणः ॥ ५३ ॥

ओभाव, विवृत्ति, श, ष, स, रेफ, जिह्वामूलीय, उपध्मानीय, यह आठ प्रकारकी ऊष्माकी गति है ॥ ५३ ॥

यद्योभावप्रसंधानमुकारादिपरंपदम् ॥
स्वरांतंतादृशंविद्याद्यदन्यद्व्यक्तमूष्मणः ॥ ५४ ॥

ओभावके आगे यदि उकारादि पद हो तो उसे स्वरान्त जाने और इससे अन्यत्र ऊष्माका ओभाव जानै ॥ ५४ ॥

ओंभावादुत्थितश्चोष्मातांतुकेलिंविनिर्दिशेत् ॥
विवृत्तंप्रतियाऊष्माविज्ञेयाविकटानना ॥ ५५ ॥

ओभावको प्राप्त हुई ऊष्माकेलि कहाती है, और विवृत्तिके आगे जो ऊष्मा हो उसे विकटानना कहते हैं ॥ ५५ ॥

लीढातिलीढविद्युच्चशषसेषुप्रकीर्तिताः ॥
जिह्वामूलेचरेफेचविज्ञेयाविठकाशठा ॥ ५६ ॥

लीढ अतिलीढ और विद्युत् यह क्रमसे श ष स में कही है, अर्थात् नाम है जिह्वामूलीय और रेफ यह विठक और शठ नामवाले हैं ॥ ५६ ॥

उपध्मानीयसहितांपुष्पिणींतांविनिर्दिशेत् ॥
अन्यत्रयाभवेदूष्मासुलभांतांविनिर्दिशेत् ॥ ५७ ॥

उपध्मानीयके सहित ऊष्माको पुष्पिणी कहते हैं, इसके शिवाय अन्य ऊष्मा सुलभा कहाती है ॥ ५७ ॥

पादाद्यंतंपदाद्यंतंतथावग्रहकालिकम् ॥
ईषत्स्पृष्टंविजानीयात्तस्मिन्कालेतुकारयेत् ॥ ५८ ॥

पादके वा पदके अन्तके अक्षर वा अवग्रह स्वरके अक्षरको ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न जानै, यह उस उच्चारण कालमें ही जानै ॥ ५८ ॥

पादादौचपदादौचसंयोगावग्रहेषुच ॥
जःशब्दइतिविज्ञेयोयोन्यःसयइतिस्मृतः ॥
उपसर्गपरोयस्तुपदादिरपिदृश्यते ॥ ५९ ॥

---

१ ओभावमागता इति वा पाठः । २ चपला तथा वा पाठः ।

पादकी आदिमें वा पदकी आदिमें वा संयोग और अवग्रहमें 'य' का 'ज' उच्चारण करे, इससे अन्यको यकारही उच्चारण करना चाहिये जो उपसर्गसे परे और पदकी आदिमें दीखै ॥ ५९ ॥

ईषत्स्पृष्टंयथाविद्युत्पदच्छेदात्परंभवेत् ॥
त्वदर्थवाचिनौवोवांवावेयदिनिपातजौ ॥ ६० ॥

वह अक्षर ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न हैं, यथा विद्युत् परन्तु पद और छन्द करनेपर ही, त्वदर्थ ( तुम्हारे ) अर्थ वाची वो वां वा वे यदि निपातसे हुए हैं ॥ ६० ॥

आदेशश्चविकल्पार्थाईषत्स्पृष्टाइतिस्मृताः ॥
विभाषयायकारःस्यात्तथानेतिपदात्परः ॥ ६१ ॥

तो इनको ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न जानै; और निपातन किये विकल्प अर्थवाले आदेश हैं क्योंकि पाणिनिशास्त्रमें भी आदेश विकल्पार्थ कहे हैं, नकारके आगे यदि यकार हो तो उसके स्थानमें अकारका उच्चारण विकल्पसे होता है ॥ ६१ ॥

भवतीत्यपिपूर्वैवतथाचसपदादपि ॥
यदेवलक्षणंयस्यवकारस्यापितद्भवेत् ॥ ६२ ॥
यत्रयत्रविशेषःस्यादिदानींससकथ्यते ॥
वकारस्त्रिविधःप्रोक्तोगुरुर्लघुर्लघूतरः ॥ ६३ ॥

और पूर्वमें तथा सपदके आगे भी जानो जो यकारका है वही वकारका जानो, जो जहां विशेष है सो अवश्य कहते हैं वकारके तीन भेद हैं गुरु लघु लघुतर॥६२॥६३॥

आदौगुरुर्लघुर्मध्येपदांतेचलघूतरः ॥ ६४ ॥

आदिमें गुरु मध्यमें लघु और पदान्तमें हो तो लघुतर कहाता है ॥ ६४ ॥

यवर्णस्त्रिविधःप्रोक्तोगुरुर्लघुर्लघूतरः ॥
आदौगुरुर्लघुर्मध्येपदान्तेतुलघूतरः ॥ ६५ ॥

यकारके भी तीन भेद हैं गुरु लघु लघुतर आदिमें गुरु मध्यमें लघु और पदान्तमें लघुतर कहाता है ॥ ६५ ॥

सन्धिजौतुपदान्तीयावुपसर्गपरौलघू ॥
अथमासनशब्देभ्योविभाषाम्रेडितेयवौ ॥ ६६ ॥

सन्धि करनेमें हुआ पदान्तका, उपसर्गसे आगे हो तो लघु मा स-न शब्दोंसे परे वा द्विरुक्तिमें विकल्प करके य लघुतर जानना ॥ ६६ ॥

पञ्चमादुत्तरोयोवोयदिचैकपदेभवेत् ॥
संहितायांलघुःसोपिपदकालेगुरुर्भवेत् ॥ ६७ ॥

पांचवें अक्षरसे आगे य, व, यदि एक पदमें हों तो संहितासे यह लघु हुएभी पदके समय गुरु हो जाते हैं ॥ ६७ ॥

हकारेरेफसंयुक्तऋवर्णोदयएववा ॥
सुस्पृष्टंतंविजानीयाद्यकारोनान्ययुग्यदि ॥ ६८ ॥

( जात्य स्वरितमें जहां वकार हो तो दोनोंकोही निक्षेप करै यथा वायव्यै और जात्य स्वरितमें यकार हो तो दोनोंका क्षेप करै यथा सदस्यै ७ । ४५ यह उदाहरण है पहले कह चुके हैं ) रेफसंयुक्त हकार और ऋवर्णमें सुस्पृष्ट प्रयत्न जाने यदि यकार दूसरेमें संयुक्त न हो तो ॥ ६८ ॥

उपांशुस्वरितंचैवयोधीतेवित्रसन्नपि ॥
अपरूपसहस्राणांसंदेहेषुप्रवर्तते ॥ ६९ ॥

जो अप्रकाशित तथा बहुत सहजमें तथा शीघ्रतासे व्याकुलतापूर्वक पढता है, वह सहस्रों भ्रष्टरूपोंके सन्देहोंमें पडता है ॥ ६९ ॥

पंचविद्यांनगृह्णंतिजडाःस्तब्धाश्चयेनराः ॥
आलसाश्चातिरोगाश्चयेषांचविस्मृतंमनः ॥ ७० ॥

जड, स्तब्ध, आलसी, रोगी, और भूलनेवाले यह पांच विद्याको नहीं प्राप्त करते ॥ ७० ॥

अहेरिवगणाद्भीतःसंमानान्नरकादिव ॥
राक्षसीभ्यइवस्त्रीभ्यःसविद्यामधिगच्छति ॥ ७१ ॥

जो संघसे सर्पकी समान सन्मानसे नरककी समान स्त्रियोंसे राक्षसियोंकी समान डरता है, वही विद्याको प्राप्त होता है ॥ ७१ ॥

नभोजनविलंबीस्यान्नचनारीनिबंधनः ॥
सुदूरमपिविद्यार्थीव्रजेद्गरुडहंसवत् ॥ ७२ ॥

भोजन करनेमें देर न करै, स्त्रियोंके बंधनमें न रहे. और गुरुस्थान दूर होवे तो भी गरुड हंसकी समान अतिशीघ्र वहां जापहुँचे ॥ ७२ ॥

यथाखनन्खनित्रेणनरोवार्यधिगच्छति ॥
तथागुरुगतांविद्यांशुश्रूषुरधिगच्छति ॥ ७३ ॥

जैसे कुदालसे खोदता हुआ मनुष्य जलको प्राप्त करता है, इसी प्रकार शुश्रूषा करनेवाला गुरुकी विद्याको प्राप्त करलेता है ॥ ७३ ॥

सुखार्थीचेत्त्यजेद्विद्यांविद्यार्थीचेत्त्यजेत्सुखम् ॥
सुखिनश्चकुतोविद्यासुखंविद्यार्थिनःकुतः ॥ ७४ ॥

जो सुखकी इच्छा करे वह विद्या नहीं पढ सकता, जो विद्यार्थी होना चाहै वह सुखकी अभिलाषा न करै, सुखियोंको विद्या कहां और विद्यार्थियोंको सुख कहां७४॥

गुणिताशतशोविद्यासहस्रावर्तितापुनः ॥
आगमिष्यतिजिह्वाग्रेस्थलान्निम्नमिवोदकम् ॥ ७५ ॥

सैकडोंवार गुनी हुई सहस्रोंवार आवृत्ति की हुई विद्या जिह्वाके अग्रभागमें उपस्थित होती हैं, जैसे नीचे स्थानसे जल ॥ ७५ ॥

शतेनगुणिताविद्यासहस्रेणचतिष्ठति ॥
शतानांचसहस्रेणप्रत्यंचमवतिष्ठति ॥ ७६ ॥

सौ आवृत्तिसे गुणित होती, और सहस्रवार आवृत्तिसे स्थित रहती है और लक्ष आवृत्तिसे पूजित रहती है ॥ ७६ ॥

जलमभ्यासयोगेनशिलायांकुरुतेक्षयम् ॥
कर्कशानांमृदुस्पर्शंकिमभ्यासान्नसाध्यते ॥ ७७ ॥

जैसे जलके अभ्याससे शिलाओंमें मार्ग पडजाते हैं, कठिन वस्तुओंके स्पर्शमें मृदुता होती है ऐसेही अभ्याससे क्या २ सिद्ध नहीं होता ॥ ७७ ॥

गुरुशुश्रूषयाविद्यापुष्कलेनधनेनवा ॥
अथवाविद्ययाविद्याचतुर्थंनोपलभ्यते ॥ ७८ ॥

गुरुकी महती सेवासे वा अधिक धनसे अथवा विद्याके बदलनेसे विद्या प्राप्त होती है ॥ ७८ ॥

शुश्रूषारहिताविद्याह्यल्पमेधागुणैः सह ।
वंध्याचयौवनीतस्यानविद्याफलिनीभवेत् ॥ ७९ ॥

जो विद्या गुरुकी शुश्रूषासे रहित हैं, तथा अल्पबुद्धि और अल्प गुणसे ग्रहण की हुई यौवनवती वन्ध्याकी समान वह विद्या फलवती नहीं होती ॥ ७९ ॥

ह्यानामिवजात्यानामर्धमात्रार्द्धशायिनाम् ॥
नहिविद्यार्थिनांनिद्राचिरंनेत्रेषुतिष्ठति ॥ ८० ॥

जैसे जात्य संज्ञक घोडे अर्धमात्रापर्यन्त शयन करते हैं, इसी प्रकार विद्यार्थियोंके नेत्रोंमें चिरकालतक निद्रा स्थित नहीं रहती ॥ ८० ॥

यथापिपीलिकैःपांसुर्वल्मीकंक्रियतेमहान् ॥
नतत्रबलसामर्थ्यमुद्यमस्तत्रकारणम् ॥ ८१ ॥

जैसे पिपीलिका धूरिके कणोंसे बड़ी वल्मीक बनालेती है उसमें बलकी बात नहीं है, केवल इसमें उद्योगही कारण है, ऐसेही उद्योगसे विद्या आती है॥ ८१ ॥

अंजनस्यक्षयंदृष्ट्वावल्मीकस्यतुसंचयम् ॥
अवंध्यंदिवसंकुर्याद्दानाध्ययनकर्मसु ॥ ८२ ॥

सुरमेका क्षय और बमईका संचय देखकर दान अध्ययनके कर्मोंमें निरन्तर समय व्यतीत करे ॥ ८२ ॥

अन्नव्यंजनयोर्भागस्तृतीयमुदकस्यच ॥
वायोःसंचारणार्थायचतुर्थमुपकल्पयेत् ॥ ८३ ॥

उदरके चार भाग कल्पना करके दोभाग अन्न व्यंजनके तीसरा जलका और चौथा वायु संचरणका रक्खै ॥ ८३ ॥

हकारंपंचमैर्युक्तमंतस्थैश्चापिसंयुतम् ॥
औरसंतंविजानीयात्कंठ्यमाहुरसंयुतम् ॥ ८४ ॥

हकार पांचमें अक्षर तथा अन्तस्थ अक्षरसे संयुक्त हो, तो उसको उरस्य जाने, और असंयुक्त हकारका स्थान कंठ है ॥ ८४ ॥

हकारोयत्रपूर्वस्थोअन्तस्थाद्योभवेत्परः ॥
पदकालेवियुज्येतसंहितायांसऔरसः ॥ ८५ ॥

जहां हकार पूर्वमें स्थित हो और अन्तस्थसे परे हो जो पदके समय पृथक् हो जाय, वह संहितामें हृदयस्थानी कहा है ॥ ८५ ॥

मेघदुंदुभिनिर्घोषोज्ञायतेपयसोह्रदात् ॥
एवंनादंप्रयोक्तव्यंसिंहस्यरुदितंयथा ॥ ८६ ॥

जैसें ह्रद ( कुंड ) में जलका मेघ दुन्दुभीकी समान शब्द होता है, अथवा जैसे सिंह गरजता है, इस प्रकार नाद करना चाहिये ॥ ८६ ॥

मासेभाद्रपदेमेघाः शब्दंकुर्वंतियादृशम् ॥
एवंगह्वरमासाद्यशुक्रं ३ । १६ दुदुह्रेतिनिदर्शनम् ॥८७॥

भादों मासमें मेघ जैसा शब्द करते हैं, इसी प्रकार एकान्तमें शब्दोच्चारण करे 'शुक्रं दुदुहे' यह जैसे उदाहरण है ॥ ८७ ॥

शेषाणांवानरायुद्धमुत्पतंतिपतंतिच ॥
एवंवर्णाःप्रयोक्तव्याइहेहैषान्निदर्शनम् ॥ ८८ ॥

और शेष अक्षरोंको जैसे वानर युद्धमें उछलते कूदते हैं इस प्रकारसे प्रयोग करे यथा 'इहेहैषां' ॥ ८८ ॥

यथापुत्रवतीस्नेहाच्चुंबतेनिजमौरसम् ॥
एवंवर्णाःप्रयोक्तव्यायुञ्जानेतिनिदर्शनम् १० । ३२ ॥८९॥

जैसें पुत्रवती स्त्री प्रेमसे अपने पुत्रका मुख चूमती है, इस प्रकारसे वर्णोंका प्रयोग करै जैसे 'युञ्जानः' १० । ३२ ॥ ८९ ॥

दर्दुरोदरदेशौतुप्रफुल्लेतेपुनर्यथा ॥
एवंवर्णाःप्रयोक्तव्याअपांफेनेतिनिदर्शनम् १९।७१ ॥९०॥

जैसें मेंडकका पेट वारंवार फूलता है इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करै 'अपांफेने' यह उदाहरण है ॥ ९० ॥

यथाभाराभरक्रांतानिश्वसंतिनराभुवि ॥
एवंवर्णाःप्रयोक्तव्या अद्भ्यःसंभृतइत्यपि ३१ । १७ ॥९१॥

जैसे भारवाले पुरुष वारंवार श्वास लेते हैं, इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करै, यथा 'अद्भ्यः सम्भृतः' इति ॥ ९१ ॥

कुक्कुटःकामलुब्धश्चककारद्वयमुच्चरेत् ॥
एवंवर्णाःप्रयोक्तव्याःकुक्कुटोसीतिनिदर्शनम्१।१६॥९२॥

जैसे कामसे लुब्ध हुआ कुक्कुट दो ककारका उच्चारण करता है इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करै 'कुक्कुटोऽसि' यह उदाहरण है:॥ ९२ ॥

वडवाचहयंदृष्ट्वायोनिंविकुरुतेयथा ॥
एवंवर्णाःप्रयोक्तव्याःसदुंदुभेतिनिदर्शनम् २८।५५॥९३॥

जैसे घोड़ी घोड़ेको देखकर अपनी योनिको चालन करती है, इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करै, 'सुदुन्दुभे' यह उदाहरण है ॥ ९३ ॥

यथाकामातुरानारीशब्दंकुर्याद्दिनेदिने ॥
तच्छब्दंकुरुतेप्राज्ञःसिꣳह्यसिनिदर्शनम् ५। १२ ॥ ९४ ॥

जैसे कामातुरा स्त्री दिन दिन शब्द करती है इसी प्रकार शब्द करै, यथा 'सिꣳह्यसि' ॥ ९४ ॥

पक्षौवितत्यखेगृध्रोभ्रान्त्यासंकुच्यतिष्ठति ॥
एवंवर्णाःप्रयोक्तव्यावार्ध्रीनसोनिदर्शनम् २४।३९ ॥९५॥

जिस प्रकार गृध्र आकाशमें पक्ष विस्तृत करके भ्रमण करता स्थित होता है इसी प्रकार वर्णोंका प्रयोग करै, यथा 'वार्ध्रीनसः' यह उदाहरण है ॥ ९५ ॥

रंगेचैवसमुत्पन्नेनोग्रसेत्पूर्वमक्षरम् ॥
स्वरंदीर्घंप्रयुञ्जीतपश्चान्नासिक्यमाचरेत् ॥ ९६ ॥

रंगके उत्पन्न होनेसे पहले अक्षरको ग्रास न करै, दीर्घ स्वरका प्रयोग करके पीछे अनुनासिक उच्चारण करै ॥ ९६ ॥

यथासौराष्ट्रिकानारीअराँइत्यभिभाषते ॥
एवंरंगःप्रवक्तव्योङ्कारःपरिवर्जितः ॥ ९७ ॥

जैसे सौराष्ट्र देशकी स्त्री अराँ इस प्रकारका भाषण करती है, इस प्रकारसे रंगका प्रयोग करै ङ्कारको छोड़कर ॥ ९७ ॥

द्विमात्रिकोमात्रिकोवानासामूलंसमाश्रितः ॥
अंतेप्रयुंजतेरंगःपंचमैःसानुनासिकः ॥ ९८ ॥

द्विमात्रिक वा एकमात्रिक नासिकामूलमें आश्रित होनेसे अन्तमें रंगका प्रयोग होता है, और पांचवें वर्णको अनुनासिक होता है ॥ ९८ ॥

अनंतरंमकारस्ययोरंगस्तत्ररंज्यते ॥
सर्वानुनासिकंविद्यादेषावध्योपधानिका ॥ ९९ ॥

मकारके अनन्तर जो रंग अक्षर हो वह सर्वानुनासिक जाने यह वध्योपधानिक संज्ञा है ॥ ९९ ॥

यरलवशषसहरज्यतेचोपधानिका ॥
वर्गांतेरंगतेयस्तुसर्वैः सर्वानुनासिका ॥ १०० ॥

य र ल व श ष स ह यह रंग अक्षरके संग वोलेजायँ उसको वद्योपधानिका कहते हैं, वर्गान्त्यमें जो रंग है वह सबके द्वारा सर्वानुनासिक कहा जाता है ॥१००॥

नासादुत्पद्यतेरंगःकांस्येनसमनिःस्वनः ॥
मृदुश्चैवद्विमात्रःस्याद्वृष्टिमान्स्यान्निदर्शनम् ७।४०॥१॥

कांसीकी समान शब्दवाला रंग नासिकासे उत्पन्न होता है, जो मृदु हो वह द्विमात्रिक होता है 'वृष्टिमान् इवेति' यह उदाहरण है ॥ १ ॥

यथाव्याघ्रीहरेत्पुत्रान्दंष्ट्राभिर्नचपीडयेत् ॥
भीतापतनभेदाभ्यांतद्वद्वर्णान्प्रयोजयेत् ॥ २ ॥

जैसे व्याघ्री डाढ़ोंसे पुत्रोंको पीड़ा न देती हुई हरण करती है, इस प्रकार स्खलित न करता हुआ वर्णोंको उच्चारण करै ॥ २ ॥

मधुरंचनचाव्यक्तंव्यक्तंचापिनपीडितम् ॥
सनाथस्यैकदेशस्यनवर्णाःसंकरंगताः ॥ ३ ॥

वाक्य मधुर हो पर अस्फुट न हो स्फुट हो परन्तु दूसरे वर्णोंसे पीडित न हो सब पूरे उच्चारण कियेजायँ संकर न होजायँ ॥ ३ ॥

यथासुमत्तनागेंद्रःपदात्पदंनिधापयेत् ॥
एवंपदंपदाद्यंतंदर्शनीयंपृथक्पृथक् ॥ ४ ॥

जैसे मत्त हाथी पदके उपरान्त पद रखता है, इस प्रकारसें पदपदान्त पृथक् पृथक् दिखाने चाहिये ॥ ४ ॥

गीतीशीघ्रीशिरःकंपीयथालिखितपाठकः ॥
अनर्थज्ञोल्पकंठश्चषडेतेपाठकाधमाः ॥ ५ ॥

गीतसा पढ़ना, शीघ्रतासे पढ़ना, शिर कंपितकरके पढ़ना, जैसा शुद्धाशुद्ध लिखा वैसा पढ़ना, अर्थका न जानना, अल्पकंठ होना यह छः प्रकारके अधम पढ़नेवाले हैं ॥ ५ ॥

माधुर्यमक्षरव्यक्तिःपदच्छेदस्तुसुस्वरः ॥
धैर्यंलयसमत्वंचषडेतेपाठकागुणाः ॥ ६ ॥

मधुरता, अक्षरोंकी स्फुटता, पदच्छेद करना, स्वरसे पढ़ना, धीरता लय होना यह छः पढ़नेवालोंके गुण हैं ॥ ६ ॥

चतुरक्षरषट्कंचनिवर्ततेपुनःपुनः ॥
आवर्ततेपदंयच्चद्विस्त्रिराम्रेडितंहितत् ॥ ७ ॥

चार छः अक्षरोंको वारंवार आवर्तित करे जो पद दो तीन वार आवृत्ति किया जाय वह आम्रेडित कहाता है ॥ ७ ॥

यथाधाम्नेधाम्नेतियजुषेयजुषेतिनिदर्शनम् १ । ३० ॥
हीयतेवर्धतेचापिपदंयत्रकृशोदरम् ॥
उपचारःसविज्ञेयउभेसु १४।४३ श्चंद्रेतिनिदर्शनम् ॥ ८ ॥

यथा धाम्ने धाम्ने । यजुषे यजुषे यह उदाहरण हैं जिस प्रकार उदर कृश होकर बढता सुकडता है ऐसा जो पद उच्चारण हो वह उपचार कहाता है, 'उभेसुश्चन्द्र' यह उदाहरण है ॥ ८ ॥

अथसप्तविधाःसंयोगपिंडाः ।

अब सात प्रकारके संयोगपिण्ड कहते हैं ।

अयस्पिंडोदारुपिंडऊर्णापिंडोज्वालापिंडोमृत्पिंडोवायुपिंडोवज्रपिंडश्चेति ॥ यमान्विद्यादयःपिंडान्सांतस्थंदारुपिंडवत् ॥
अंतस्थयमवर्जंतुऊर्णापिंडंविनिर्दिशेत् ॥ १ ॥

अयस्पिण्ड, दारुपिण्ड, ऊर्णापिण्ड, मृत्पिण्ड, ज्वालापिण्ड, वायुपिण्ड और वज्रपिण्ड यह सात पिण्ड हैं । यमोंको अयःपिण्ड, सान्तस्थोंको दारुपिण्ड, यमरहित अन्तस्थोंको ऊर्णापिण्ड जाने ॥ १ ॥

अंतस्थंयमसंयोगेविशेषोनोपलभ्यते ॥
अशरीरंयमंविद्यादंतस्थंपिंडनायकम् ॥ २ ॥

अन्तस्थ और यमके संयोगोंमें विशेष नहीं जाना जाता, यमको अशरीर और अन्तस्थको पिण्डनायक जाने ॥ २ ॥

ज्वालापिंडान्सनासिक्यान्सानुस्वारांस्तुमृन्मयान् ॥
सोपध्मावायुपिंडाश्चजिह्वामूलेतुवज्रिणः ॥ ३ ॥

नासिक्य वर्णोंको ज्वालापिण्ड, स्वरोंको मृन्मयपिण्ड जाने, उपध्मानियोंको वायुपिण्ड और जिह्वामूलियोंको वज्रपिण्ड जाने ॥ ३ ॥

अयःपिंडोनामयथा । अग्निः २३ । १७ पंक्तीः २७ । २० ।
तनच्मि १ ।४ दारुपिंडोनामयथा । अश्वं÷२४ । १ सूर्य÷२९ ।
विश्वाजनस्यंइतिभवति ५ । २८ । तत्रऊर्णापिंडोनामयथा ॥
अस्मिन् ३ । १ यस्मिन् २० । ७८ अमुष्मिन् १७ । २ इति

भवति ॥ तत्रज्वालापिंडोनामयथा । ब्रह्म १३ । ३ वह्नितमम् १ । २ गृह्णामीतिभवति । तत्रमृत्पिंडोनामयथा॥स॒ꣳ१९।२९ स्थाम्।सꣳस्कर्त्तारः।सꣳस्वर्त्तइति । तत्रवायुपिंडोनामयथा । देवसवितः९।१युञ्जानःप्रथमम्११।१ प्रादिवःककुत्सुतमितिभवति ॥ तत्रवज्रपिंडोनामयथा । इष्कृतिः१२।८३ निष्कृतिः ऋक्सामयोः ४ । ९ । इतिभवति ॥ प्रथमेनपकारेण सकारेणैव संयुतम्॥एतत्स्वरंसमासाद्यअग्निष्वात्तानिदर्शनम्।१९।६१॥४॥

अयःपिण्ड जैसे अग्नीः इत्यादि, दारुपिण्ड जैसे अश्वः इत्यादि, ऊर्णापिण्ड जैसे यस्मिन् इत्यादि, ज्वालापिण्ड जैसे ब्रह्म इत्यादि, मृत्पिण्ड जैसे सꣳस्थाम् इत्यादि, वायुपिण्ड यथा देवसवितः इत्यादि, वज्रपिण्ड जैसे इष्कृतिः इत्यादि । यदि प्रथम पकारका सकारसे संयोग हो तो इस स्वरसे 'अग्निष्वात्ताः' यह प्रयोग होता है॥४॥

प्रथमेनठकारेणथकारेणैवसंयुतम् ॥
एतत्स्वरंसमासाद्यअधिष्ठाननिदर्शनम् १७ । १८ ॥ ५ ॥

प्रथम ठकार और थकारके संयोगसे 'अधिष्ठान' उदाहरण होता है, कहीं षकार ठकारका संयोग ऐसा लिखा है ॥ ५ ॥

प्रथमेनणकारेणनकारेणैवसंयुतम् ॥
एतत्स्वरंसमासाद्यत्रिणवत्रयस्त्रिꣳशावितिनिदर्शनम् १०।१४।६

पहले णकारका नकारसेही संयोग होय तो इस स्वरसे त्रिणवत्रयस्त्रिꣳश, यह स्वर होता है ॥ ६ ॥

प्रथमेनैवरंगेणनकारेणैवसंयुतम् ॥
एतद्रञ्जितमासाद्यवृष्टिमानितिनिदर्शनम् ७ । ४६ ॥ ७ ॥

पहले रंगका नकारसे संयोग हो तो इस रंगको प्राप्त होकर 'वृष्टिमाँ २ ॥' उदाहरण होता है ७ । ४० ॥ ७ ॥

एतेककारादयोमकारपर्यवसानाः कृष्णाव्याख्याताः।शनैश्चरदैवत्याः।चत्वार्यंतस्थायरलवाःकपिलवर्णाःअग्निदैवत्याः।चत्वार्यूष्माणःशषसहा अरुणवर्णाःआदित्यदैवत्याः ॥ त्रयस्त्रिꣳशद्व्यंजनानिस्पर्शाअंतस्थाऊष्माणश्चेति।चतुर्विधंकरणम्॥स्पृष्ट-

मस्पृष्टंसंवृतंविवृतंचेति॥ संवृतोघोषाविवृताअघोषाः।विंशतिर्घोषास्तेगजडदबाघझढधभाङञणनमाःयरलवाश्चेति।त्रयोदशअघोषास्तेकचटतपाः खछठथफाःशषसाश्चेति।षड्विधमास्यप्रयत्नम् ॥ संवृतं विवृतमस्पृष्टंस्पृष्टमीषत्स्पृष्टंचार्द्धस्पृष्टंचेति । तत्र। अकारः संवृतोज्ञेयइतरेविवृताःस्वराः॥सर्वेचतेस्युरस्पृष्टाः स्पर्शास्पृष्टा भवन्तिहि ॥ ८॥

यह ककारसे लेकर मकारपर्यन्त २५ स्पर्श वर्ण कृष्णवर्ण शनैश्चर देवतावाले हैं, चार अन्तस्थ यरलव कपिलवर्ण अग्नि देवतावाले हैं,चार ऊष्माण शषसह अरुणवर्ण आदित्य देवतावाले हैं. इस प्रकार स्पर्श ऊष्म अन्तस्थ यह ३३ व्यंजन हैं। चार प्रकारका करण है स्पृष्ट अस्पृष्ट संवृत विवृत, संवृत घोष और विवृत अघोष हैं बीस वर्ण घोष प्रयत्नवाले हैं वे–गं ज ड द ब, घ झ ढ ध भ, ङ ञ ण न म, य र ल व,तेरह अघोष हैं, क च ट त प, ख छ ठ थ फ, श ष स, आस्यप्रयत्न छः प्रकारका है संवृत, विवृत अस्पृष्ट, स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट और अर्धस्पृष्ट । अकारका संवृत प्रयत्न और सब स्वर विवृत प्रयत्नवाले हैं, और यह सबही अस्पृष्ट हैं स्पर्श वर्ण स्पृष्ट प्रयत्नवाले हैं ॥ ८ ॥

ईषत्स्पृष्टास्तथान्तस्थाऊष्माणोर्द्धस्पृशःस्वराः ॥
सामान्यंभजतेवर्णः संस्थानकरणस्यहि ॥ ९ ॥

अन्तस्थ ईषत्स्पृष्ट और ऊष्माण अर्धस्पृष्ट हैं, यह वर्ण सामान्यतासे अपने करण, स्थानको प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥

ऋलोर्मध्येभवत्यर्धमात्रारेफलकारयोः ॥
तस्मादस्पृष्टतानस्यादृलकारनिरूपणे ॥ १० ॥

ऋ लके मध्यमें रेफ लकारकी आधी मात्रा है, इससे ऋ लके निरूपणमें अस्पृष्टता नहीं होती ॥ १० ॥

वर्गाणांप्रथमाद्वितीयाःशषसहाश्चाघोषाघोषास्त्वन्येदशधावर्णा भवन्ति।अष्टौवर्णस्थानानि भवन्ति औरस्यकंठ्यमूर्धन्यतालुदन्त्योष्ठ्यदन्तमूलजिह्वामूलयमानुनासिक्याश्चेति॥ द्वौऔरस्यौह ह्वइतिअआआ३ अवर्णहकारविसर्जनीया इति। त्रयःकंठ्याः।

ऋषट्मूर्द्धन्याः । टठडढणष ३ इति । दशतालव्याः । चछज झञयशइईई ३ इति । अष्टौदंत्याः।तथदधनलॡलसाः अष्टावोष्ठ्याः । पफबभमाउऊऊ ३ वउपध्माचेत्यादयः । एकोदंतमूलीयोरेफः । जिह्वामूलीयाःपंच । कुंखुंगुंघुंङुंइति । क्मख्मग्मघ्मकुंखुंगुंघुंइतियमाश्चत्वारः॥रुक्मतिप्रथमोज्ञेयःसक्थ्याइत्यपरोभवेत् २३।२९ तृतीयःविघ्नइत्याहुः १२। १९ उपध्मेतिचतुर्थकः॥११॥

वर्गोंका पहला दूसरा अक्षर श ष स ह यह अघोष हैं, इससे शेष घोष हैं वर्ण दशस्थान भेदवाले हैं। हृदय, कंठ, मूर्धा, तालु, दन्त, ओष्ठ,दन्तमूलीय, जिह्वामूलीय, यम अनुनासिक। दो उरस्थानी हैं, ह्ह ह्य, तीन कंठस्थानी, अवर्ण, ह और विसर्ग, छः मूर्धन्य हैं,ट ठ ड ढ ण ष,दश तालुस्थानीय हैं,च छ ज झ ञ य श इ ई ई ३। आठ दन्तस्थानीय हैं त थ द ध न ॡ ल स, आठ ओष्ठस्थानीय हैं प फ ब भ म व उ उपध्मानीय एक रेफ दन्तमूलीय है पांच जिह्वामूलीय हैं ऋ कवर्ग कुं खुं गुं घुं ङुं इति। चार यम हैं क्म, ख्म,ग्म, घ्म, वा कुं खुं गुं घुं यह रुक्म यह प्रथमका सक्थ २३। २९ दूसरा विघ्न १२। १९ उपध्मेति वा जम्भेद्ध्मेति १६। ६४ चौथा ॥ ११ ॥

प्रथमौचौष्ठनासिक्यौ द्वितीयः कंठचदंत्यश्चनासामूलमुपाश्रितः॥तृतीयःकंठचजिह्वाग्रेनासायामेवनिर्दिशेत्॥चतुर्थोहृदिनासिक्यःकंठेचाभिहितायमाः ॥ १२ ॥

पहला ओष्ठ और नासिकास्थानीय,दूसरा कण्ठ और दन्तस्थानीय,नासामूलमें स्थित तीसरा कंठ और जिह्वाके अग्रभागमें नासिकामें निर्देश किया है, चौथा हृदय और नासिकास्थानीय, और कण्ठस्थानीय यम कहा है ॥ १२ ॥

आपंचमैश्चैकपादःसंयुक्तंपंचमाक्षरम् ॥
उत्पद्यतेयमस्तत्रसोङ्गपूर्वाक्षरस्यहि ॥ १३ ॥

पंचम वर्णतक एक पदमें वा पांचवें अक्षरके आगे संयोगमें यम प्रगट होता है, वह पूर्व अक्षरका अङ्ग है ॥ १३ ॥

पंचमाःशषसैर्युक्ताअन्तस्थैर्वापिसंयुताः ॥
यमास्तत्रनिवर्तंतेश्मशानादिवबांधवाः ॥ १४ ॥

---

१ जम्भेद्ध्मेतिं चतुर्थकमिति वा पाठः ।

पांचवाँ अक्षर स श ष से युक्त हो वा अन्तस्थ वर्णसे संयुक्त हो तो वहाँ यम निवृत्त होजाते हैं, जैसे श्मशानसे बंधुक्षन ॥ १४ ॥

ऋवर्णेतिपरेसादावनुस्वारोद्विमात्रकः ॥
संयोगेपरभूतेषुह्रस्वएवोच्यतेबुधैः ॥ १५ ॥

ऋवर्णसे परे सकारकी आदिमें अनुस्वार द्विमात्रिक होता है. और संयोगमें परभूत होनेसे पंडितोंद्वारा ह्रस्व कहाजाता है ॥ १५ ॥

आद्यामात्रातुकण्ठ्यस्य एकारौकारयोर्भवेत् ॥
तालव्यस्यतथोष्ठ्यस्यद्वितीयाचयथाक्रमम् ॥ १६ ॥

एकार ओकारकी पहली मात्रा कंठस्थानीय जानो, दूसरी तालु ओष्ठस्थानीय यथा क्रमसे जानो ॥ १६ ॥

यादृशीरत्नवर्णाभाजपायाःकुसुमेथवा ॥
तादृशंरञ्जयेद्वर्णप्रान्तेनासिक्यमाचरेत् ॥ १७ ॥

जिसप्रकार रत्नोंकी कान्ति वा जपाके फूलोंकी कान्ति होती है, इसप्रकार वर्णों को रंजित कर प्रान्तभागमें अनुनासिक उच्चारण करै ॥ १७ ॥

लाक्षारक्तंयथातोयंनकारान्तंपदंतथा ॥
सर्वरंगंविजानीयाच्छत्रूनितिनिदर्शनम् ॥ १८ ॥

जैसे लाखके रंगका जल होता है इसीप्रकार नकारान्त पद रंजित हैं, इन सबको रंग जानै यथा 'शत्रूनिति' ७ । ३७ यह उदाहरण है ॥ १८ ॥

लुप्तेनकारेयत्स्वारंरञ्जन्तिशौनकादयः ॥
आदिरङ्गंविजानीयान्नचासीदिवविन्दति ॥ १९ ॥

नकारके लुप्त होनेमें जो शौनकादि स्वरको रंजित करते हैं, उसको आदि रंग जानै उसे स्थितिकी समान नहीं जाना जाता ॥ १९ ॥

प्रथमस्थषकारेणतकारेणचसंयुतम् ॥
एतदक्षरमासाद्यत्रिष्टुभेतिनिदर्शनम् ॥ २० ॥

पहले षकार तकारसे संयुक्त यह स्वर 'त्रिष्टुभेति' २८ । ४० इस प्रकारका होता है ॥ २० ॥

प्रथमस्थषकारेणथकारेणचसंयुतम् ॥
एतत्स्वरंसमासाद्याधिष्ठानमितिनिदर्शनम् ॥ २१ ॥

पहले पकार थकारसे संयुक्त होनेसे 'अधिष्ठान' यह उदाहरण १७।१६ होताहै ॥ २१ ॥

चतुर्थंचतृतीयेन द्वितीयंप्रथमेनच ॥
आद्यंमध्यन्तथान्त्यञ्चस्वरूपेणाभिपीडयेत् ॥ २२ ॥

चौथे वर्णको तीसरेसे, दूसरेको पहलेसे इस प्रकार आदि मध्य और अन्त्य पञ्चम अक्षरको स्वरूपसे पीडित करै ॥ २२ ॥

अवग्रहपदच्छेद उदात्तंदृश्यतेयदि ॥
स्वरन्तंस्वरितंप्राहुःसन्धौतुस्वार्य्यतेपरम् ॥ २३ ॥

अवग्रह और पदच्छेदमें यदि उदात्त दिखाई दे उस स्वरको स्वरित कहेंगे, और सन्धिमें वह परवर्णसे स्वार संज्ञावाला होता है ॥ २३ ॥

स्वरसन्धिविधानेननीचोच्चंतुविधीयते ॥
व्यञ्जनाद्वास्वराद्वापितत्सन्धौस्वरउच्यते ॥ २४ ॥

स्वरसन्धिके विधानसे अनुदात्त उदात्त होजाता है, व्यञ्जनसे वा स्वरसे उस सन्धिमें स्वर कहाजाता है ॥ २४ ॥

उदात्तान्निहितःस्वारःस्वरितात्प्रचयोभवेत् ॥
उदात्तात्स्वरितात्पूर्वोनान्यआपद्यतेस्वरः ॥ २५ ॥

उदात्तसे निहित हुआ स्वार, स्वरितसे प्रचय होता है उदात्त और स्वरितसे पूर्व अन्य स्वर नहीं होता ॥ २५ ॥

पदकालेयःस्वरितः संहितायांतथैवच ॥
स्वरिताच्चेद्भवेत्पश्चात्सएवनिचितःस्वरः ॥ २६ ॥

जो पद कालमें स्वरित है, संहितामें भी स्वरित है स्वरितसे पीछे होनेवालाही निश्चित स्वर है ॥ २६ ॥

प्रथमाश्चतृतीयाःस्युःपरेघोषवतिस्थिते ॥
पञ्चमाःपंचमेपाठेद्वितीयाःशषसेषुच ॥ २७ ॥

आगे घोषवान् वर्णोंको स्थित होनेमें पहलोंको तीसरे होजाते है, पाठमें पांचवें वर्णको पांचवां और शषस परे होनेसे दूसरे वर्ण होते हैं ॥ २७ ॥

उदात्तान्निहितःस्वार्य्यःस्वारोदात्तौनतत्परौ ॥
स्वरितोयस्तथाभूतोज्ञेयःसप्रचयःसदा ॥ २८ ॥

उदात्तसे निहित स्वार होता है उससे परे स्वारोदात्त नहीं होते, जो इस प्रकारका स्वरित है उसको प्रचय जानना चाहिये ॥ २८ ॥

उच्चानुदात्तयोर्योगेस्वरितःस्वारउच्यते ॥
ऐक्यंतत्प्रचयःप्रोक्तःसन्धिरेषांमिथोद्भुतः ॥ २९ ॥

उदात्त अनुदात्तके योगमें स्वरितही स्वार कहाता है, इनकी एकता होनेसे प्रचय होता है, इनकी सन्धि ( संयोग ) अद्भुत है ॥ २९ ॥

वह्नीजिह्वायथाग्राह्यात्यह्नोवह्निस्तथैवच ॥
ब्रह्मरूपंविजानीयाद्गुरुमेवात्मनःसदा ॥ ३० ॥

वह्नी जिह्वा जैसे ग्रहण किया जाता है इसी प्रकार अह्नः वह्निः उच्चरित होता है, अपने गुरुको सदा ब्रह्मरूप जाने ॥ ३० ॥

यत्किञ्चिद्वाङ्मयंलोकेसर्वमत्रप्रतिष्ठितम् ॥
करोतितत्प्रदानंयत्तस्माद्ब्रह्ममयोगुरुः ॥ ३१ ॥

जो कुछ लोकमें वाणी ( शास्त्र ) है वह सब इसमें प्रतिष्ठित है उसके दान करनेसेही गुरु ब्रह्ममय कहाता है ॥ ३१ ॥

विधिनाप्यंविधिज्ञानमविधानान्नलभ्यते ॥
अविधानपरोनित्यंप्रायश्चित्तीभवेन्नरः ॥ ३२ ॥

ज्ञान विधिसेही प्राप्त होता है, अविधिसे नहीं, असावधानी करनेसे मनुष्य प्रायश्चित्ती होता है ॥ ३२ ॥

युक्तियुक्तंवचोग्राह्यंनग्राह्यंगुरुगौरवात् ॥
सर्वशास्त्ररहस्यंतद्याज्ञवल्क्येनभाषितम् ॥ ३३ ॥

इति श्रीयोगिप्रवरयाज्ञवल्क्यप्रोक्ताशिक्षासमाप्ता.

युक्तियुक्त वचनकोही ग्रहण करना चाहिये, केवल गुरुके गौरवसेही ग्रहण करना यह नहीं, यह सब शास्त्रका रहस्य याज्ञवल्क्यने वर्णन किया है ॥ ३३ ॥

इति श्रीमहर्षियोगिवरयाज्ञवल्क्यप्रोक्ता; पण्डितज्वालाप्रसादमिश्रकृत–
भाषाटीकासहिता शिक्षा समाप्ता.

॥ शुभमस्तु ॥

---

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–
खेमराज श्रीकृष्णदास,
" श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–बम्बई.

अवश्य द्रष्टव्य.